CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य-रामप्रपन्नाचार्य

योगीन्द्र जगत्पति विश्वात्मा द्वारकाधीश श्री श्रीमद् संस्थापित

# जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य-पीठ

## पवित्र धार्मिक मासिक

कार्यालय ॥ आचार्यपीठ श्री कोशलेन्द्रमठ सरखेजरोड
पो० पालडी अहमदाबाद ३८०००७
दूरभाष- ४११००१

संरक्षक ॥ श्रेष्ठ श्री अमरशी कुरजी मजिठिया
सम्पादक ॥ जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी
सहसम्पादक ॥ पं. श्री शरचन्द्र शास्त्री
व्यवस्थापक ॥ म. म. स्वामी रामावतारदासजी (रत्न)

---

पैर्वेदान्तार्थे कलुषितपथम्प्रापयतियो
विशिष्टाद्वैताख्यं प्रथितमतमेतत्प्रकटयन् ।
परप्रत्यग्भेदं श्रुतिशिरसिसिद्धं विशदयन्
यतीरामानन्दः स हि सुगुणसिन्धुर्विजयते ॥
(जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरघुवराचार्याः)

---

वर्ष १५ विक्रमाब्द २०५० अङ्क ११
श्रीरामानन्दाब्द ६९३ जनवरी १९९४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रीमद्विक्रमवत्सरे रसकृपञ्चत्रीन्दुसंख्यान्विते
सच्छ्रीवैष्णवधर्मशुद्धविमलं वेदादिसम्वर्णितम् ।
ज्ञात्वाक्षीणमुपागतमसितके रामः स्वयं माघके
सप्तम्यां समवातरत् क्षितितले देवादिसम्प्रार्थितः ।।

[१३५६ १५३२]

श्रीमद्विक्रमवत्सरेऽक्षगुणपञ्चकेन्दुसंख्येक्षिति
मुञ्झित्वा मधुमासके सुदिनवभ्यां वै तिथौ शोभने ।
धर्मं वैष्णवकं विमुक्तिफलदं सन्यस्य सम्मानवे
रामानन्दसुदेशिकेन्द्रसमगात्साकेतलोकं परम् ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



प्रतिदिनमिह भक्त्या राममाराध्यमर्च्यम् ।
यतिभिरपि दुरापं प्राप्यधामाद्वितीयं,
निरवधि भवदुःखान्मुच्यते शीघ्रमेव ॥१२३॥

करता है वह शीघ्र ही यतियों के लिये भी अति दुर्लभ अद्वितीय परमधाम श्रीसाकेत को प्राप्त करके अपार भवरूपसागर के दुःखों से सदा के लिये मुक्त हो जाता है ।

हे महामाया सर्वेश्वरी श्रीसीताजी ? हे सर्वेश्वर श्रीरामजी इस असहायरूप से अनन्त काल से भवसागर में भटके जीवको अपनी अहैतुकी कृपा द्वारा शीघ्र पार उतारिये ॥१२३॥

इति आनन्दभाष्यसिंहासनासीन जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य
स्वामी श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी
प्रणीते श्रीरामगीता–प्रकाशे प्रथमोऽध्यायः

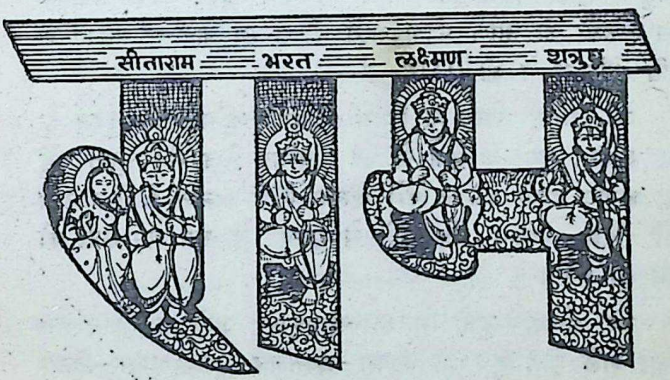


श्रीरामः शरणं मम



Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

## द्वितीयोऽध्यायः

卐 श्रीशुक उवाच 卐

उपान्तोदितरौद्रांशं वैष्णवानां व्यवस्थितम् ।
तदैवांशमुपादित्सुं ब्रह्माणं च निजेच्छया ॥१॥
अनन्ततत्त्वाभरणमनन्ताऽऽदित्यवर्चसम् ।
अनन्तकस्वन्नेत्रशिरोवक्त्रक्रियान्वितम् ॥२॥
निराकारं च साकारं प्रभामण्डलमण्डितम् ।

श्रीशुकदेवजी श्रीसनकजी से कहते हैं हे सनकजी ! श्रीशंकर जी की स्तुति से प्रसन्न होकर उनके इच्छानुसार उन्हे वरदान देने के बाद सर्व तन्त्र स्वतन्त्र होने से सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी के अपनी स्वतन्त्र इच्छा से सुव्यवस्थित रौद्रांश–शंकर ब्रह्मा तथा विष्णु के सृष्टि स्थिति और संहार रूप तीन कार्यों को सम्पादनार्थ तीन स्वरूपों को धारण–ग्रहण करने की इच्छा वाले–श्रीरामजी की स्तुति श्रीविष्णु ने की ॥१॥

जो अनन्त तत्त्वों के दिव्य आभरण–शृंगारों से युक्त हैं और अनन्त सूर्यों के तेज से भी अधिक तेज से युक्त हैं तथा अनन्त हाथों अनन्त पैरों अनन्त नेत्रों अनन्त शिरों अनन्त मुहों और अनन्त क्रियाओं से युक्त हैं–उन श्रीरामजी की स्तुति की ॥२॥

जो श्रीरामचन्द्रजी निराकार–सामान्यतः जनों से अलक्षित आकार वाले होते हुये भी साकार–भक्तजन सुलभ आकार–दिव्य मूर्ति वाले तथा अनन्त प्रभा मण्डल तेज समूहों से मण्डित अति शोभित और विश्व के एकमात्र साक्षी तथा विश्वरूप होते

Nepal Sanskrit University; Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



विश्वौकसाक्षिणं विश्वं विश्वातीतं निरञ्जनम् ॥३॥
क्वचित्प्रसन्नमेवात्र शान्तमन्यत्र भैरवम् ।
नानाशक्तिसमाकीर्णमधृष्यानेकविग्रहम् ॥४॥
इत्थमीश्वरभावेन क्रीडन्तं परमेश्वरम् ।
प्रतिलोमविलग्नैश्च ब्रह्माण्डैरभिमण्डितम् ॥५॥
बहुरूपमरूपं च दृष्ट्वा रामं हरिस्तदा ।
तुष्टाव प्रणतो भूत्वा भूयोभूयः कृताञ्जलिः ॥६॥

हुये भी विश्वातीत यानी विश्व से पर-भिन्नरूप से व्यवस्थित और निरञ्जन अर्थात् किसी प्रकार के आवरणों से रहित हैं उनकी प्रार्थना की ॥३॥

कहीं पर सर्वाभय प्रद प्रसन्न वदन वाले तो कहीं पर शान्त गंभीर स्वरूप में स्थित तथा कहीं पर दुष्ट निग्रहार्थ भैरव रूप में स्थित अनेक प्रकार की शक्तियों से आकीर्ण-सर्वतोभाव से व्याप्त अधृष्य-किसी से भी दबाये नहीं जा सकने वाले-अपराजीत अनेक-अनन्त विग्रह स्वरूप वाले श्रीरामजी की प्रार्थना की ॥४॥

प्रत्येक रोमकूप में लगे अनन्त ब्रह्माण्डों से अत्यन्त सुशोभित देदिप्यमान आकृति वाले पूर्व वर्णित प्रकार से अपने स्वाभाविक ईश्वर पने से क्रीडा कर रहे परमेश्वर श्रीरामजी की प्रार्थना की ॥५॥

"अजायमानो बहुधा विजायते" श्रुति के अनुसार प्रसंगोपात्त बहुत-अनन्त रूपों को तथा प्रसंगोपात्त अरूपीतया-अलक्ष्य गति से रहकर विविध कार्यों को सम्पादन करने वाले सर्वेश्वर श्रीरामजी को अवलोकनकर श्रीविष्णु भगवान दोनो हाथ जोडकर प्रणत होकर मस्तक नमा कर अति आदर के साथ बार-बार स्तुति करने लगे ॥६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF


श्रीविष्णुरुवाच

नमो रामाय विभवे तुभ्यं विश्वैकसाक्षिणे ।
नमो विश्वैकदेहाय नमो विश्वातिगाय ते ॥७॥
नमो नित्याय शुद्धाय प्रभवे कालमूर्त्तये ।
दशदिग्बाहवे तुभ्यं नमो भूचरणाय च ॥८॥
नमोभोरेतसे शश्वत्तेजा नेत्राय ते नमः ।
वायुचेष्टाय महते व्योमदेहाय ते नमः ॥९॥
अहं ते हृदयं राम ! तव नाभिः पितामहः ।
कण्ठस्ते नीलकण्ठोऽसौ भ्रूमध्यं च दिवेश्वरः ॥१०॥

श्रीविष्णु भगवान बोले–हे विश्वरूप श्रीरामजी ? आप सर्व व्यापक तथा विश्व के गुप्त तथा प्रकट एकमात्र साक्षी हैं ऐसे आपको सादर नमस्कार है, श्रीराम ? यह सम्पूर्ण विश्व ही एकमात्र आपका शरीर है तथापि विश्व से परतया अलिप्त भाव से रहनेवाले सर्वस्वरूप श्रीराम आपको बार–बार नमस्कार है ।७॥

नित्य शुद्ध तथा कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुं समर्थ कालमूर्ति आपको नमस्कार हो दशों दिशाएँ जिनके हाथ हैं पृथिवी जिनका चरण है ऐसे सर्व विश्वस्वरूप आपको सादर अभिवादन है ॥८॥

प्रभो श्रीरामजी ? जल ही आपका वीर्य है सनातन तेज ही सब प्रकाशमय आपके आंखें हैं ऐसे आपको बार बार नमस्कार है । वायुदेव जिन आपकी चेष्टा है तथा आकाश ही जिनका शरीर है ऐसे महापुरुष सर्वमय आपको पुनः पुनः प्रणाम है ॥९॥

सर्वेश्वर श्रीरामजी ? पालन कर्ता विष्णु–मैं आपका हृदय हूं, सृष्टि कर्ता पितामह ब्रह्मा आप के नाभि हैं, संहार कर्त्ता ये नील कण्ठ–शंकरजी आपके कण्ठ हैं, दिवेश्वर सूर्यदेव आपके भौंहों का मध्यभाग है ऐसे आपको नमस्कार है ॥१०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



सदाशिवो ललाटस्ते तत ऊर्ध्वं परः शिवः ।
भूषणानि च तत्त्वानि विश्वाकाराय ते प्रभो ? ॥२२॥
भूरादिसप्तलोकाश्च नृत्यतो रङ्गभूमयः ।
सप्तपातालगर्तश्च पार्ष्णिघाताः स्थिता हि ते ॥२३॥
अनन्ताः शक्तयो राम ? प्रदृश्यन्ते तव प्रभो ? ।
अहंश्चादृष्टपूर्वांश्च पश्याम्यद्य पितामहान् ॥२३॥
विष्णुनसंख्यान् पश्यामि त्वयि रुद्रानने कशः ।

सर्व समर्थ श्रीरामजी ? आपका ललाट ही सदाशिव हैं ललाट से ऊपर का भाग पर शिव—परात्पर शिव हैं, प्रभो ? सारे विश्व के आकार—प्रकार वाले विश्व रूप आपके सम्पूर्ण तत्त्व आभूषण हैं ॥२२॥

सर्व रमणशील श्रीरामजी ? आपके नृत्य करते समय भूर्लोक भुवर्लोक स्वर्लोक महर्लोक जनलोक तपलोक तथा सत्यलोक ऊपर के ये सात लोक रंग भूमि नृत्यशाला बन जाते हैं तथा सात पातालगर्त यानी अतल वितल सुतल तलातल महातल पाताल प्रभृति सात नीचे के लोक आपके पादतल के चायु के रूप में स्थित हो जातें हैं ॥२३॥

सर्व शक्तिमान् श्रीराम ? आज आपकी अनन्त शक्तियां देखी जा रही हैं, प्रभो ? आज मैं आपके श्रीविग्रह में पहले कभी नहीं देखे गये अनेक पितामह सृष्टि कर्ता ब्रह्माजी को देख रहा हूं ॥२३॥

सर्व स्वरूप श्रीराम ? आपके अन्दर में ही मैं अनेक विष्णु यानी सर्व पालन कर्ता विष्णु मेरे स्वरूप को देख रहा हूं तथा आप में ही संहार कर्ता देव रुद्र—शंकरजी के अनेक रूपों को

Nepál Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



बहुरूपान् बहुभुजान् बहुवर्णान् महोदयान् ॥१४॥
वर्तमानानतीतांश्च सुरानिह भविष्यतः ।
नाहमन्तं प्रपश्यामि विभूतीनां तव प्रभो ! ॥१५॥
देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसकिन्नराः ।
विद्याधराश्च ऋषयः सिद्धाश्च सहचारणैः ॥१६॥
नराश्च पितरश्चैव पशवश्च सरीसृपाः ।
त्वदेकरोमकूपे तु लीयन्ते स्थावरैः सह ॥१७॥
सेयं माया गुणमयी प्रपञ्चोऽयं यदात्मकः ।

देख रहा हूं, जिन देवों के बहुत से रूप हैं, अनन्त हाथ हैं, अनन्त वर्ण हैं तथा महान् अभ्युदयकारी हैं ॥१४॥

सर्वदेवमय सर्व समर्थ प्रभो ! आपके इस दिव्य रूपमें उन सुरों को जोकि अतीत जो हो चुके हैं वर्तमान में हैं तथा जो भविष्य में होने वाले हैं सभीको अच्छी तरह से देख रहा हूं प्रभो ? विश्वरूप श्रीराम ? आपकी इस विभूति का अनन्त होने से अन्त मैं नहीं दिख रहा हूं ॥१५॥

विश्वरूप प्रभो ? आपके एक ही रोमकूप में देवगण दानवगण गन्धर्वगण यक्षगण तथा किन्नरों के साथ राक्षसगण और विद्याधर समूह ऋषि समूह तथा चारणगणों के साथ सिद्ध समूह और नर समूह पितरगण पशुपक्षि समूह तथा सर्प और नागगण ये सब के सब अन्य स्थावर जंगमों के साथ विलीन हो रहे हैं ॥१६—१८॥

प्रभो ? यह आपके समक्ष स्थित वही सर्वेश्वरी श्रीसीताजी हैं जो गुणातीत होते हुये भी त्रिगुणमयी माया के रूप में लक्षित हैं आपके इच्छानुसार जिनके संकेत मात्र से यह संपूर्ण स्थावर जंगमात्मक प्रपञ्च उत्पन्न होता है । जो कि आप से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



तवेच्छातः समुत्पन्ना यया विश्वं विमोह्यते ॥१८॥
तवांशवोऽमी चिद्भानोः क्षेत्रज्ञास्त्वस्मदादयः ।
भिन्ना इव प्रदृश्यन्ते मायया परमार्थतः ॥१९॥
यत्र ग्रहा सनक्षत्राः सिद्धाश्च ऋषयस्तथा ।
येन व्याप्तं च सकलं तत्रो नाभिर्विभो ? नमः ॥२०॥
त्वामाहुरानन्दमखण्डमेकं
निरस्तमायोपधिमाप्तवाचः ।

अधिज न होने पर भी लोक लीला सम्पादनार्थ आपकी इच्छा से अलग रूप से समुत्पन्न हुई हैं जिसके द्वारा विश्व को विमोहित किया जाता है ॥१८॥

हे सर्वेश्वर ? यद्यपि परमार्थतः वास्तविक रूप से अनुसन्धान करें तो सर्व प्रकाशमय सर्व रूप आपके ही अस्मदादि मैं विष्णु, ब्रह्मा शंकर या ये अनुभूयमान इन्द्र प्रभृति सभी जीवात्मा गण अंश हैं अतः अंश अंशीभाव से आप से अभिन्न होने पर भी आपकी ही माया से विमोहित होकर भिन्न के जैसे देखे जाते हैं वस्तुतः हम सब आप से भिन्न नहीं ॥१९॥

विभो ? सर्व व्यापक श्रीराम ? जहां पर सभी नक्षत्रों के साथ सभी ग्रह सिद्धगण तथा ऋषिगण सर्वदा विचरण करते हैं जिस आकाश ने चराचर संसार को व्याप्त कर रखा है वह आकाश तो आपकी नाभी मात्र है तो आपका पूर्ण स्वरूप क्या होगा मैं कैसे जानू ? अतः श्रीराम ? प्रसन्न होकर अपना स्वरूप आपही बता दें ताकि हमसब भय तथा संशयमुक्तहों जांय ।२०।

निरुपाधिक श्रीराम ? वेद वाणी अथवा सर्वदा शास्त्रगर्भित सत्य बोलने वाले प्रामाणिक महर्षि–आचार्य प्रवर लोग आपको आनन्द स्वरूप अखण्ड रूप तथा आपके समान या अधिक से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



यस्मिन् सपक्षो न च वा विपक्षो
न चाध्वषट्कं न मलत्रयं च ॥२१॥
षड्भिर्मयो वा न च नामरूपै,
न कारणं त्वं न च कार्यतापि ।
नान्तो न चादिर्न च मध्यमीष,
दालम्बनं नैव च शून्यभावः ॥२२॥

रहित एकमात्र अद्वितीय और समस्त माया जनित उपाधि से रहित कहते हैं जिन अद्वितीय रूप आप में सपक्ष किसी व्यक्ति के प्रति अपने पना से पक्षपात ही है नवा किसी में पराये पना से वैर भाव ही है । तथैव आप में उत्पत्ति जन्म, स्थिति रहना, वृद्धि–बढना, विपरिणति–बदलना, अपचय–घटना, तथा नाश नष्ट हो जाना प्रभृति छविकार ही हैं नवा आप में कायिक वाचिक तथा मानसिक ये तीन प्रकार के मल ही हैं ॥२१॥

अध्व षट्कों तथा मलत्रयों से रहित परम विशुद्ध स्वरूप श्रीरामचन्द्रजी ? आप में ये सर्दी गर्मी, लोभ–मोह, भूख–प्यास या जरा–मृत्यु, शोक–मोह, तथा भूख–प्यास प्रभृतिक ऊर्मियां नही हैं तथैव सामान्यत नाम रूप भी नहीं अर्थात् आप इनसे परे हैं तथा आप में कारणता और कार्यता भी नहीं है यानी सर्व विश्व के अभिन्न निमित्तोपादान कारण होते हुये भी अविकृत रूप से इनसे परे हैं आप में किसी प्रकार का विकार नही होता है । तथा आपका न अन्त है नवा आदि ही है और न मध्य ही है यानी आप आदि मध्य तथा अन्त से रहित हैं । तथा आप दूसरे के थोडे से भी आलम्बन आधार रहित होकर दूसरों के आधार बनकर अपनी ही महिमा में स्थित हैं अतः आदि मध्यान्त रहित होने से आप में शून्य भाव भी नहीं कि आप सर्व शून्य हों पर सर्वानुस्यूत होकर एक रस हैं ऐसे आपको प्रणाम हो ॥२२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



यतोऽति दूरे निवसन्ति वाचो,
मानान्यनेकानि हृदा सहैव ।
ये नैव विश्वं महसा स्वभासा,
पूर्णं सुसूक्ष्मेण निरन्तरेण ॥२३॥

यस्यांशभूताश्च वयं तथान्ये,
सुराः समस्ताः पितरश्च सर्वे ।
किं वा बहूक्तेन जगत्समस्तं,
विभो ? विभूतिः परमारिरंसोः ॥२४॥

अनन्तरूप श्रीराम ? आपको जानने का प्रयत्न करने वालों के अनेक प्रमाण तथा हृदय यानी मन के साथ वाणी अथवा वेद वाणी भी आप तक न पहूँच पाने या आपके तात्विक स्वरूप को न जान पाने के कारण अति दूर में ही रह जाती हैं। जिन आपके महान् स्वप्रकाश जो कि परम सूक्ष्म तथा अतिसय रूप से विश्व को सर्वदा प्रकाशित कर रहा है ऐसे तेजोपुंज आपको कौन जान सकता है कि आप कौन हैं। अर्थात् आप को जानने का साधन एकमात्र आपकी शरणागति है अन्य कोई भी साधन से नहीं अतः हे शरणागत वत्सल श्रीराम ? मैं आप के शरण में हूं मेरी रक्षा करें ॥२३॥

सर्वभूतमय प्रभो ? हमलोग–ब्रह्मा विष्णु तथा शंकर आपके ही अंश हैं तथा ये समस्त सुरगण और सम्पूर्ण पितरगण भी आपके ही अंशभूत हैं। सर्व व्यापक श्रीराम ? इस विषय में बहुत कहने गिनती करने से क्या प्रयोजन अनेक रूपों से रमण करने की इच्छावाले आपकी यह समस्त जगत् ही परम विभूति है ॥२४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



परात्परायाहृतविश्वभूम्ने,
तस्मै स्वधाऽऽत्मने हि नमो वितन्मः ।
यज्ञानशेषान् जुहुमश्च यस्मै,
स्वधां विदध्मः प्रपितामहाय ॥२५॥
त्रयी समस्ता च वषट्कृतिः सा,
स्वाहा जगद्विश्वभुजे च यस्मै ।
उद्गीथ एवाऽमलं यदाप्तै,
र्वेदादिबीजं विजितानिलानाम् ॥२६॥

जो आप परात्पर स्वरूप हैं तथा स्वधाम-अपनी ही स्थिति में अविकृत रूप से रहकर अपनी लीलावशात् काल में समस्त विश्व को अपने में समेट लेने वाले हैं ऐसे सर्व भूतमय आपको अनेक बार नमस्कार करते हैं । जिन सर्व यज्ञमय आपको उद्देश्य करके सभी यज्ञों में आहुतिजां प्रदान की जाती हैं तथा सर्व पितृरूप प्रपितामह परमपिता आपके उद्देश्य से ही स्वधा का विनियोग किया जाता है ऐसे आपको नमस्कार है ॥२५॥

वेद प्रतिपाद्य श्रीराम ? जिन आपके लिये जगत में स्वाहा का और वषट्कार का तथा वेद त्रयी ऋक् यजु तथा सामका प्रयोग किया जाता है क्योंकि वेद प्रतिपादित सभी कर्मों का भोक्ता स्वीकर्ता विश्वभुक् विश्व का पालन पोषण करने वाले आप ही हैं । प्राणायामादि साधनों द्वारा वायु को वस में करने वाले साधकों को आपकी प्राप्ति के लिये वेदों का आदि बीजाक्षर उद्गीथ- ॐ कार की साधना ही पर्याप्त साधन है यानी "राम नाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः" अर्थात् राम नाम 'रां' इस बीजाक्षर से उत्पन्न ॐ कार मोक्ष देने वाला है इस आगम वचन प्रामाण्य से ॐ कार की उपासना भी श्रीराम सायुज्य देने वाला है अतः ॐ कार साधकों को सायुज्य देने वाले आपको अनेकवार नमस्कार हो ॥२६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



नित्याय नित्यप्रभवे प्रभूणां सदावधूताखिलविक्रियाय ।
द्वयन्त्य विद्योपहताश्च यस्मै,मर्त्यादिभावं परिकल्प्यमूढाः २७

देवाश्च सिद्धा ऋषयश्च सर्वे,
वेदान्ततत्त्वार्थविदोयतीन्द्राः ।
भक्त्यैव राम ? स्पृहयन्ति यस्मै,
त्वमेव तद् ब्रह्म यदद्वितीयम् ॥२८॥

यदैकमात्मानमनेकधैव,
विभज्य विश्वं व्यतनोदमूर्त्त ? ।

प्रभो ? आप सर्वदा एकरूप रहने वाले नित्य हैं तथा नित्य समर्थ शालियों को नियन्त्रित करने वाले परम प्रभु हैं और सर्वदा सम्पूर्ण विकारों से रहित होकर स्थित हैं यानी जन्म स्थिति उपचय अपचय वृद्धि ह्रास इन छ विकारों से रहित विशुद्ध परात्पर ब्रह्म हैं तथापि आप सामान्य मानव हैं ऐसी कल्पना करके अविद्या से नष्ट हुये ज्ञान वाले मूढ लोग आपसे द्रोह करते हैं ॥२७॥

सर्वाराध्य श्रीरामजी ? सभी देवता सम्पूर्ण सिद्धलोग और सब ऋषि वर्ग तथा वेदान्त तत्त्वों को भलिभांती जानने वाले संयमन शील यतीन्द्रवर्ग जिस आपको अन्य कोई प्राप्ति का मार्ग न होने से केवल अनन्य भक्ति से ही प्राप्त करने की इच्छा करते हैं वह अद्वितीय परब्रह्म तत्त्व आप ही हैं दूसरा कोई नहीं ॥२८॥

हेय गुणोंसे रहित तथा अनन्त दिव्यगुणों से युक्त दिव्य मूर्ति वाले प्रभो ? जब आप ने अपना अद्वितीय एक रूप को अनेक रूप में विभक्त करके विश्व का विस्तार किया उसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



तदैव भानोरिव रश्मयोऽमी,
त्वत्तो वयं राम ? विनिःसृता हि ॥२९॥
राम ? क्रियाशक्तिरियं हि पञ्च,
प्राणान्समाविश्य करोति विश्वम् ।
चिच्छक्तिरेषा तव पञ्चधैव,
भुङ्क्ते जगच्चापि हि पञ्चवक्त्रा ॥३०॥
इच्छोभयत्राऽनुगतादृशास्या,
सृजत्यवत्यत्ति च शक्तिराद्या ।

समय में सूर्य से निकली हुई इन रश्मियों के समान हम सब विष्णु ब्रह्मा शंकर इन्द्रादि सभी देव वर्ग आप से ही निकले हुये हैं तो सर्व सर्जक श्रीराम ? आपके शेषभूत हम सबों को आप से ही भीती कैसे ? ॥२९॥

हे राम ? यह आपकी आप से अभिन्न रूपा क्रिया शक्ति ही पञ्च प्राणों-प्राण अपान-उदान-समान तथा व्यान के रूप में प्रवेश करके विश्व को उत्पन्न करती है तथा यह आपकी ही चित् शक्ति पञ्चधा विभक्त होकर पञ्च मुही बनकर इस जगत् का यथेच्छ उपभोग करती है यानी अन्य साधनों के द्वारा भी सृष्टि और भोग-पालन के मूलकारण आपही हैं अन्य नहीं ।३०।

हे विश्व मूर्ति श्रीरामजी ? सर्व भोग कारिणी आपकी शक्ति आपकी ही इच्छा रूप से इस लोक तथा परलोक में व्याप्त है जो दशों इन्द्रिय रूप मुह वाली है । वही आद्या शक्ति ही आपके निर्देशानुसार इस विश्व की सृष्टि पालन तथा संहार करती है । अनन्त शक्ति सम्पन्न आपकी शक्ति का अन्त नहीं है आप विश्व मूर्ति हैं अतः समस्तविश्व आपका ही शरीर है

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



अनन्तशक्तेरिह विश्वमूर्त्तेः
स्तिस्त्रोदृशः शक्तिमतस्तवैव ॥३१॥

याभिर्महेश्वर ! सितासितलोहिताभिः
स्वाभिः कलाभिरचलप्रभुरात्मतृप्तः ।
सत्वं प्रपञ्चयसि विश्वतया विहर्त्तुं,
त्वामेकमेव विभुमव्ययमद्वितीयम् ॥३२॥

ताभ्यस्तिसृभ्य उदिता ननु तावकिभ्यो,
गौरीन्दिरागिर इहेश्वरशक्तयोऽपि ।
तत्षोडशांशविभवानि वसन्ति नित्यं
रुद्रेषु विष्णुषु विधातृषु विश्वभूत्यै ॥३३॥

अतिशय शक्ति वाले आपकी ये तीन दृष्टियां–सृष्टि–पालन तथा संहार रूपीणी भी आपकी ही हैं अन्य किसी की नहीं ॥३१॥

हे महेश्वर ? आप अपने में ही तृप्त रहने वाले सर्व समर्थशाली तथा अविचल हैं एकमेव अद्वितीय और सर्वव्यापक हैं तो भी विहार मानवी क्रीडा करने की इच्छा से अपनी ही श्वेत कृष्ण तथा लाल रंगकी कलाओं से विश्वरूप से सृष्टि को विस्तार करते हैं तथा उसी में नानाभावों से सदा रमण करते हैं । अतः सर्व रमणशील श्रीरामजी ? हम सब आपके शरण हैं सबों की रक्षा करें ॥३२॥

विश्वरूप प्रभो ? उही आपकी तीन शक्तियों से ईश्वीय तीन गौरी इन्दिरा तथा सारस्वती रूप शक्तियां उद्भूत हुई हैं वे उनकी ही सोलह अंशकलाओं के साथ विश्व के कल्याण के हेतु शंकरों विष्णुओं तथा ब्रह्माओं में सदा निवास करती हैं ॥३३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



पूज्योऽहमन्धकरिपुश्च तथा विरञ्चि
स्त्वद्भावभावितततयैव जगत्सु नित्यम् ।
एतेऽपि केचन जयन्ति निरस्तकामा
स्त्वद्भक्तिधौतमनसो भुवनेऽवधूताः ॥३४॥
अपि स्वदेहादिषु निः स्पृहाणा
माकाशलीनानिलचेष्टितानाम् ।
त्वमेव कल्याणकृतां मुनीना
मालम्बनं ध्वस्तभवाटवीनाम् ॥३५॥
किं तन्महेश्वर ! विभो ! बहुधा विमृश्य,
तत्रासि यत्सदपि वाप्यसदेव वस्तु ।

सर्वेश्वर श्रीरामजी ? आपकी भावनाओं से भावित होने के कारण से ही मेरी अन्धकरिपु–शंकर तथा ब्रह्माजी की संसार में सदा पूजा होती है । तथा कुछ ये अवधूत वृत्ति तथा वेश वाले कितने हीं जीव वर्ग हैं जो आपकी भक्ति रूपी गंगा में मनके मैल को धोकर समस्त कामनाओं से रहित होकर संसार में विजयशील हो रहे हैं ॥३४॥

सर्व विश्व के आश्रय भूत प्रभो ? अपने देह आदि में भी स्पृहा–मोहरहित होकर रहने वाले जिनकी शरीर की चेष्टा भी आकाश में व्याप्त वायु से ही होती है तथा जिनके भव संसार रूप अटवी–जंगल नष्ट हो चुका है अर्थात् संसार रूप बन्धन जिन का सम्पूर्णतया नाश हो गया है ऐसे संसार कल्याण कारी मुनियों के आप ही एकमात्र आलम्बन हैं ॥३५॥

सर्व व्यापक हे महेश्वर ? आप किसी भी प्रकार के परिणाम रहित हैं तथैव सत् रूपसे व्यवहृत तथा असत् क्षणिकरूपतया व्यवहृत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



ज्ञातुं तथाप्यपरिमेय न शक्यते तै
येंषामनुग्रहदृशा न पुनासि चेतः ॥३६॥
क्वचायं मानुषो भावः क्वचायमतिलौकिकः ।
त्वन्मायामोहितानां नस्त्वमेव शरणं भव ॥३७॥
कोऽसि ब्रूहि महेशान ? किं तवाद्य समीहितम् ।
अत्यद्भुतं ते वैश्वात्म्यं मुह्यामो यन्निरीक्षणात् ।३८।
त्वमेव वेत्थ त्वां सम्यग्योऽसि सोऽसि महेश्वर ? ।

सभी पदार्थों में विराजमान हैं तथापि आपका अपरिमेय स्वरूप होने से अहैतुकि कृपा दृष्टि से जिन लोगों का अन्तः करण को आप पवित्र नहीं कर देते हैं उन लोगों से अनेक प्रकार से विचार-ध्यान तप योग या अन्य साधनाओं से नहीं जाने जाते अर्थात अनन्यानुराग रूपा भक्ति या प्रपत्ति से ही आप का यथार्थ स्वरूपको जाना जा सकता है अन्य साधनोंसे नहीं ।३६।

सर्व विश्वमय श्रीराम ? कहां तो यह आपका सामान्य मनुष्य भाव यानी सर्व मोहक मनुष्य लीला कहां तो यह लोकोत्तर चमत्कार पूर्ण अलौकिक विश्व रूप प्रभो ? आपके अघटना पटीयसी माया से मोहित हम सबों का आप ही आश्रय हों अर्थात शरणागत रक्षक श्रीराम ? हम सभी आपके शरण में हैं सभों की रक्षा करें ॥३७॥

हे महेशान ? आप कौन हैं ? हमें बतलाइये तथा आज आप क्या करना चाहते हैं ? अत्यन्त अद्भुत यह आपका विश्व रूप को देखकर हम सब महामोह में फंस गये हैं अतः आप कौन और क्या हैं यह नहीं जान पा रहे हैं ॥३८॥

हे महेश्वर ? आप ही अपने स्वरूप को अच्छी तरह से जानते हैं कि आप कैसे और क्या हैं आपके मायाधीन हम सब

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



द्योत्यसे नैव मानैस्त्वं खद्योतैर्द्युमणिर्यथा ॥३९॥
अन्तोऽस्ति परमाणूनां मरुत्तेजोम्बुभूमिषु ।
नान्तोऽस्ति त्वयि लीनानां ब्रह्माण्डानामखण्डिते ॥४०॥
लक्ष्यन्ते येन बहवो ब्रह्माणोऽतिपराक्रमाः ।
विलक्षणा मिथश्चैते स्वरूपायुधवाहनैः ॥४१॥
केचिच्चतुर्मुखाः केचित्पञ्चवक्त्राश्च षण्मुखाः ।
दशवक्त्रा शतास्याश्च सहस्रवदना अपि ॥४२॥

क्या जानें प्रभो ? आप जो कोई भी हों पर आप किसी भी प्रमाणों के द्वारा मापे या प्रकाश में नहीं लाये जा सकते हैं जैसे जुगुओं द्वारा सूर्य मापे या प्रकाश में नहीं ले आये जा सकते हैं तो श्रीराम ? हमसब आपको कैसे जान सकते हैं ।३९।

सर्वेश्वर श्रीरामजी ? प्रयत्न करने पर वायु अग्नि जल तथा पृथिवी में स्थित परमाणुओं का अन्त तो किसी प्रकार मिल सकता है परन्तु अनन्त–अखण्ड स्वरूप आप में स्थित अनन्त ब्रह्माण्डों का अन्त नहीं पाया जा सकता है ॥४०॥

विश्वरूप श्रीरामजी ? आप से ही उत्पन्न हुये अति पराक्रमशाली अनेक ब्रह्मा आप के इस शरीर में दीख पड रहे हैं जो अपने अपने आकृति आयुध तथा वाहनों से भी परस्पर में एक दूसरे से विलक्षण–अतिशय भिन्न भिन्न हैं एक दूसरे से मेल नहीं खाता ॥४१॥

विभो ? उनमें से कोई चार मुह वाले हैं कोई पांच मुह वाले हैं तो कोई ६ मुह वाले हैं और कोई दश मुख के हैं तो कोई सौ मुखवाले हैं तथा कोई कोई हजारमुख वाले हैं ।४२।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



बहुवक्त्रा बहुभुजा बहुरूपा स्तथा परे ।
विचित्रसृष्टिकुशला विचित्रायुधवाहनाः ॥४३॥
विचित्रशक्तयो भक्त्या त्वां नमन्ति महेश्वरम् ।
स्तुवन्ति बहुभिः स्तोत्रैरेके ध्यायन्ति निश्चलाः ॥४४॥
त्वत्प्राप्त्युपायमन्योन्यं बोधयन्ति विमत्सराः ।
प्रपन्नाः सर्वभावेन त्वमेव शरणं परम् ॥४५॥

अनन्तरूप प्रभो ! अन्य कितने ही ब्रह्मा तो बहुत से मुख वाले तथा बहुत हाथ वाले और बहुत रूप वाले हैं जो सामान्यतः गिनना भी अशक्य प्राय है ये लोग नाना प्रकार की सृष्टि में परमनिपुण हैं तथा विचित्र प्रकार के आयुध तथा वाहन वाले हैं ॥४३॥

सर्वेश्वर ! ये परिदृश्यमान ब्रह्मा विचित्र–अति अद्भुत शक्ति वाले हैं वे सब सर्व जग के ईश्वर आप को अति भक्ति के साथ सादर नमन कर रहे हैं उन में से कितने ही अनेक प्रकार के स्तोत्रों सामगानादि के द्वारा आपकी स्तुति कर रहे हैं तो अन्य कतिपय निश्चलरूप से अति एकाग्र मन से सर्व ज्ञानधेय आप का ध्यान कर रहे हैं ॥४४॥

सर्वशरण्य श्रीराम ! वे सभी लोग मत्सर से रहित होकर अन्योन्य यानी परस्पर एक दूसरे को आप के ही प्राप्ति का उपाय भक्ति प्रपत्ति–शरणागति आदि का भेदों उपभेदों का बोधकरा रहे हैं जोकि वे भी सब के सब शरणगतों के परमा श्रयदाता–सर्वाभयदाता आपके ही सर्वतोभाव से शरणापन्न हैं क्योंकि उन्हे आपकी 'सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते । अभयं सर्वभूतेभ्योददाम्येतद्व्रतं मम' वाली सभी को अभय देने वाली वाणी सर्वदा स्मरण रहती है अतः वे आप के दिव्यनाम संकीर्तन तथा जपमें संलग्न रहते हैं ॥४५॥



Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



एवं बहुविधाकारवाहनायुधविग्रहाः ।
विचित्रशक्तयोऽनन्ता हरयश्च कपर्दिनः ॥४६॥
त्वत्प्रभांशांशविभवास्त्वां सदा पर्युपासते ।
अनुगृह्णीष्व भक्तान्नः प्रसादाद्विश्वतोमुख ! ॥४७॥

श्रीशुक उवाच :

इति तेन स्तुतो रामो विष्णुना प्रभविष्णुना ।
प्रसन्नोत्फुल्लवदनः प्रहसन्वाक्यमब्रवीत् ॥४८॥

विश्वरूप प्रभो ! जैसे अनन्त प्रकार के ब्रह्मादि दिखलाई देते हैं उसी प्रकार से विचित्र नाना प्रकार की अनन्त शक्ति वाले अनन्त विष्णु तथा अनन्त शंकर भी दिखाई पड रहे हैं जो अनेक प्रकार के आकृति नाना प्रकार के वाहन तथा अनेक प्रकार के आयुधों शस्त्रों अस्त्रों और विग्रहों से युक्त हैं ॥४६॥

हे विश्वतो मुख ! सर्वविश्वमय सर्वेश्वर श्रीरामजी ! ये सब ब्रह्मा शंकर विष्णु प्रभृति आपके प्रभा के अंश के भी अंश से उत्पन्न हुये हैं वे सभी सर्वतो भाव से सदा आपकी ही उपासना करते हैं अतः सर्वस्वरूप श्रीराम ! आप के शरण में आये आपके भक्त हम सबों पर आपके प्रसादमय स्वभाव द्वारा अनुग्रह करें यानी हम सबों पर प्रसन्न हो जांय ॥४७॥

श्रीशुकदेवजी कहते हैं हे सनकजी ! पूर्वोक्त प्रकार से अति प्रभाव शाली श्रीविष्णु भगवान के द्वारा स्तुति किये गये श्रीरामचन्द्रजी का श्रीमुख प्रसन्नता से उत्फुल्ल यानी शरद कालिन कमल के समान विकसित हो उठा और श्रीरामजी ने मधुर मुस्कान करते हुये निम्न प्रकार से कहा ॥४८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



श्रीराम उवाच

अहमात्मा परो नित्यः सन्मात्रो विभुरीश्वरः ।
सदसद्भावरहितो भेदाभेदविवर्जितः ॥४९॥
एकोऽद्वितीयोऽविकृतो निराकारो निरञ्जनः ।
मच्छक्तयो विश्वमिदं भिन्नाभिन्नतया स्थितम् ॥५०॥
यत्र त्वमन्ये बहवस्तत्त्वानामधिपाः सुराः ।
मदंशांशावलम्बेन खे खद्योता इवासते ॥५१॥

श्रीरामजीने कहा हे विष्णुजी ? मैं सभी चराचर वर्गों की आत्मा हूं तथा इन सभी से पर भी हूं नित्य अविनाशी हूं, सत् मात्र–सत् चित् तथा आनन्द स्वरूप हूं, विभु-सर्व व्यापक और सभी को सन्नियन्त्रण करने वाला ईश्वर हूं यों सर्वेश्वर होते हुये भी सत् तथा असत् भावों से यानी सत्ता रूप तथा असत्ता रूप बिकारों से रहित हूं तथैव भेद तथा अभेद से भी बर्जित सर्वदा एक रस से सब में विहरण करने वाला हूं ॥४९॥

हे विष्णो ? मैं एक हूं अद्वितीय हूं तथा विकारों से रहित हूं और सर्वमय होते हुये भी सामान्य लौकिक आकार से रहित हूं तथा निरञ्जन यानी लौकिक हेय माया से रहित हूं । यह परिदृश्यमान विश्व मेरी अलौकिक शक्तियों का विलास मात्र है जो मुझसे तथा इन मेरी शक्तियों से भी भिन्न रूप से और अभिन्न रूप से भी अवस्थित तथा अनुभूयमान है ॥५०॥

मुझसे उत्पादित इस विश्व में आप विष्णु तथा अन्य बहुत से अलग अलग तत्त्वों के अधीश्वर सुर–देवगण मेरे अंश के भी अंश के सहारे आकाश में जुगुनुओं की भांति अवस्थि हैं ॥५१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



अहमेवादिरानन्दो निरालम्बः स्वराट् विभुः ।
सर्वः सर्वगतः शान्तः शुद्धचैतन्यविग्रहः ॥५२॥
आकाशस्यास्मि चाकाशोदिग्दिशामस्मि शाश्वती ।
कालस्यापि महान्कालो ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम् ॥५३॥
कारणं कारणानां च करणानामहं मनः ।
अणूनां परमाणीयान्महतां च महत्तरः ॥५४॥
विभुर्विभूनामधिकस्तत्त्वानां तत्त्वमुत्तमम् ।
योगो निर्वाणमार्गाणामहमस्मि सनातनः ॥५५॥

हे विष्णुजी ! आप यह जानें कि मैं ही आदि सभी का आदि कारण हूँ आनन्द स्वरूप हूँ दूसरे किसी भी प्रकार के आधार रहित अपने तत्त्व में ही स्थित व्यापक तथा स्वराट् स्वयं प्रकाश हूँ और सर्व व्यापक सम्पूर्ण भूतों में व्यापक शान्त शुद्ध तथा चैतन्य विग्रह—परम विशुद्ध दिव्य शरीरवाला हूँ ।५२।

हे विष्णुजी ? मैं ही आकाश का भी कारणभूत आकाश हूँ, तथा मैं ही दिशाओं की भी शाश्वत—सनातनी दिशा हूँ तथैव काल का भी महाकाल हूँ ज.गु. श्रीतुलसीदासजी ने भी कहा है "तात राम नहिं नर भूपाला भुवनेश्वर काल हुँ कर काला" और ज्योतियों की भी उत्तम सर्वकारणभूत ज्योति मैं ही हूँ ।५३।

मैं ही कारणों का कारण तथा कारणों में यानी इन्द्रियों का नियन्त्रण करने वालों में मन हूँ और अणुओं में परमाणु तथा महान् महनीय पदार्थों में महत्तर—सबोंसे महान् भी मैं ही हूँ ।५४।

विभुओं में सर्व श्रेष्ठ विभु मैं ही हूँ तथा तत्त्वों में उत्तम तत्त्व भी मैं ही हूँ और निर्माण मार्ग यानी निवृत्ति मार्गियों का सनातन योग मार्ग भी मैं ही हूँ ॥५५॥

Nepal Sānskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



प्राणः प्राणभृतामस्मि दमश्चास्मि तपस्विनाम् ।
शान्तिरस्मि मुमुक्षूणां प्रणवोऽस्मि गिरामहम् ॥५६॥
विधिः क्रियावतामस्मि निवृत्तिरपि योगिनाम् ।
दीक्षितानां रतिश्चास्मि विरतिश्च विवेकिनाम् ॥५७॥
महोपनिषदं विष्णो ! संगृह्य कथयामि ते ।
समना संसरिष्णूनामुन्मनास्मि मदर्थिनाम् ॥५८॥
यत् किञ्चित्परमं लोके तत् तदस्मि जनार्दन ! ।
मया व्याप्तमिदं विष्णो ! विश्वमव्यक्ततेजसा ॥५९॥

मैं प्राण धारियों का प्राण हूँ तथा तपस्वियों का इन्द्रिय दमन रूप तप हूँ और मुमुक्षुओं की लिये शान्ति हूँ तथा वाणियों में मैं प्रणव ॐ कार हूँ ॥५६॥

मैं ही क्रियावालों में विधि–क्रिया हूँ तथा योगियों की निवृत्ति भी मैं ही हूँ और दीक्षितों की यानी किसी कार्य में संलग्नों के लिये मैं ही रति कार्य सफल सूचक निश्छल प्रेम हूँ तथा विवेकीयों ज्ञानियों का विरति वैराग्य भी मैं ही हूँ ।५७।

हे विष्णो ! मैं आपको महोपनिषद् का अति संक्षिप्त सार को संग्रह करके कहता हूँ वह सूने मैं ही संसरणशील गमनशीलों के लिये समना हूँ तथा मेरे प्राप्ति के लिये प्रयत्न शीलों के लिये उन्मना बन्धन रहित उन्मुक्त मन वाला भी मैं ही हूँ ॥५८॥

हे जनार्दन ! बहुत वर्णन कहां तक करुं संक्षेप में यों समझें कि लोकों में परमोत्कृष्ट जो कुछ भी और जितना भी पदार्थ हैं वे सब कुछ मैं ही हूँ परिदृश्यमान तथा समनुभूय समस्त चराचर जगत् मुझ से ही व्याप्त है हे विष्णो ! संक्षेप में आप ऐसा मानो कि अव्यक्त अपरिलक्षित विशिष्ट मेरे तेज से यह समस्त विश्व व्याप्त है मुझसे खाली कुछभी नहीं है ।५९।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



श्रीशुक उवाच

इति ब्रुवन्नचिन्त्यात्मा सर्वेषामेव पश्यताम् ।
विसृज्य मानुषं भावं वैश्वात्म्यं जगृहे तथा ॥६०॥
तथा विसृष्टवैश्वात्म्यं स्वानन्देनाति बृंहितः ।
परमाकाशतामेत्य रामोलक्ष्यतमब्रवीत् ॥६१॥
अदृष्टमूर्त्तेरभवद्विरंसोर्मत्तो रमेश ! ध्वनिरम्बरादिः ।
मदिच्छयैवाखिलवाक् प्रपञ्चस्ततः परस्मादुदभूदुदर्कः ६२

श्रीशुकदेवजी कहते हैं हे सनकजी ? इस पूर्वोक्त प्रकार से कहते हुये उन अचिन्त्यात्मा सर्वेश्वर श्रीरामजी ने सभी के देखते देखते मनुष्य भाव को त्यागकर उसी समय में विश्वरूप को धारण कर लिया ॥६०॥

हे सनकजी उस समय में श्रीरामचन्द्रजी अपने ही आनन्द के कारण अति वृद्धि को प्राप्त हो गये यानी अत्यन्त हर्ष के कारण अति विशाल रूप धारण कर लिया पुनः उस विश्वरूप को छोडकर परमाकाश यानी चिदाकाश अर्थात् अपना सौम्य स्वाभाविक श्रीराम रूप को धारण करके श्रीरामजी ने श्रीविष्णु भगवान् को लक्ष्य करके कहा ॥६१॥

हे रमेशजी ? सृष्टि के आदि काल में जब मेरी रमण करने की इच्छा हुई तब अलक्ष्य गति से स्थित मुझ से आकाश की कारण भूता ध्वनि उत्पन्न हुई, पुनः मेरी इच्छानुसार ही सम्पूर्ण वाणी आदि का प्रपञ्च विस्तार उत्पन्न हुआ, उसकेबाद उपसंहार का उद्भव हुआ यानी मेरे संकल्पानुसार ही सृष्टि स्थिति तथा प्रलय होते हैं ॥६२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



लीने च यस्मिन् स्वयमद्वितीय स्फुरामि साक्षादहमेक एव ।
योगोत्थितेनाप्यमृतत्वमेषां, भवेद्यतीनामिह एव येन ।६३।
इतोऽष्टयायात्मभुवे विधातुः,
पुरस्त्वतोताय कृशानुशीर्ष्णः ।
मयोपदिष्टं गगनादिसृष्टेः,
प्रागेवकालोत्तरमाद्यतन्त्रम् ।।६४।।

हे विष्णुजी ? जिस समस्त प्रपंच के मुझ में विलीन हो जाने पर केवल मैं ही अद्वितीय रूप से स्वतः साक्षात् रूपतया स्फुरित रहता हूं यानी प्रलयावस्था में केवल मैं शेष रहता हूं अन्य सब मुझ में विलीन हो जाते हैं । मात्र मेरे ही शेष रह जाने से संसार में सर्वदा साधना परायण योगिजनों के योगाभ्यास से जायमान अमृतत्त्व की भी प्राप्ति हो जाती है ।।६३।।

हे विष्णुजी ? सृष्टि के प्रारम्भ में ही कृशानुशीर्षा श्री शंकरजी के कार्यरत होने से पूर्व में ही अष्टयामा पुरस्त्वनाभिधान वाले स्वयंभु के रूप में प्रसिद्ध विधाता को मैंने ही गगन प्रभृति प्रपञ्च की सृष्टि के पूर्व में ही लोकोत्तर कल्याण कारक आद्य तन्त्र वेद राशी को उपदेश दिया है, वेद में लिखा है "यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै । तं ह आत्मबुद्धि प्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये" यानी जिसने सर्व प्रथम ब्रह्माजी की सृष्टि की तथा उन्हे वेद पढाया मैं मुक्ति की इच्छा वाला उन सर्व प्रकाश स्वरूप सर्वेश्वर श्रीरामजी की शरणागति स्वीकार करता हूं । अर्थात् मुमुक्षुओं को श्रीराम शरणागति से अतिरिक्त भवतरणोपाय नहीं है अतः जीवों को श्रीरामशरणागति अवश्य स्वीकारना चाहिये ।।६४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



तदेवदिग् विश्वसृजाममीषां,
तत्त्वत्रयात्मा विवृतं यथावत् ।
यत्रैव दृष्टाः सकलाश्च वेदा,
यैरात्मभूर्विश्वमयं व्यधत्त ॥६५॥
व्योम्नीव ताराणि यदक्षराणि,
स्फुरन्ति चात्रैव मदन्तराले ।
मच्छक्तयस्त्वत्प्रमुखा मुरारे !
यैर्व्यक्तिमायान्ति सुराः समस्ताः ॥६६॥
येभ्यः समुद्धृत्य मयोपदिष्ट
मुपास्यते तारकमन्त्रराजम् ।

हे विष्णो ? जिस वेदात्मा मुझ में ही तत्त्वत्रय यानी जीवात्मा माया तथा ईश्वर तत्त्व ब्रह्म का यथार्थ रूप से विवरण यानी निरूपण होता है और मुझ में ही अपने अंग उपांगों के साथ संपूर्ण वेद दृष्ट देखे जाते हैं यानी सभी वेदों का लक्ष्य भूत तत्त्व मैं ही हूं अतः सभी वेदादि शास्त्र मुझ में ही परिणत होते हैं । जिन वेदों–मदुपदिष्ट तत्त्वों के द्वारा ही आत्मभू मुझसे सर्व प्रथम उत्पन्न ब्रह्माजी ने इस ब्रह्माण्ड की रचना की है वही इन आपसे मेरे शरीर में देखे गये अनन्त ब्रह्माजीओं का पथ प्रदर्शक है ॥६५॥

हे मुरारे ? जिस प्रकार आकाश में अविनाशी अनन्त तारागण स्फुरित–चमकते रहते हैं उसी प्रकार से मेरी अनन्त शक्तियां भी मेरे ही अन्तराल अन्दर में सर्वदा कार्यरत रहती हैं जिनमें तुम विष्णु प्रधान हो ऐसे समस्त देवगण प्रकट होते हैं ॥६६॥

हे विष्णु ? जिन आप सर्वों के विशिष्ट शक्ति के आकलनार्थ मैंने तारक आमन्त्र राज को प्रकट करके आप सर्वों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



स्रक्षन्त्यनेनैव जगन्ति रुद्राः
सिद्धाश्च साध्या ऋषयश्च भूयः ॥६७॥

अनेन मन्त्रेण च बालखिल्या,
वैखानसा मद्गतचेतसोऽत्र ।

सृष्ट्वैव सम्यक्सुविधूतमाया,
मामेव चेष्यन्त्यपि चक्रपाणे ? ॥६८॥

प्राणांस्त्यजन्तोमणिकर्णिकायां,
यद्वाचकं तारकमुच्चरन्तः ।

श्रुत्वा च वेदान्तमुपास्य वाच्यं,
पश्यन्ति मामेव हि विश्वनाथम् ॥६९॥

को श्रीमन्त्रराज का उपदेश किया उसी मन्त्रराज षडक्षर महामन्त्र की उपासना करके उसी के शक्ति के बल से वे रुद्र सिद्धगण साध्यगण और ऋषिगण पुनः लोकों की सृष्टि करते हैं ॥६७॥

हे चक्रपाणिजी ? इसी महामन्त्र के आराधन के प्रभाव से ही प्राप्त विशिष्ट शक्ति के द्वारा सृष्टि करने पर भी मुझ में ही सर्वदा लगे हुये मन वाले होने से अच्छी प्रकार से विधूत दूर कर दिया हैं माया-मोह को जिन्हों ने ऐसे वे वैखानस बालखिल्य ऋषिगण भी मुझ को ही प्राप्त करने के लिये सर्वदा प्रयत्नशील रहते हैं ॥६८॥

विष्णो ? जो जीव वर्ग मणिकर्णिका क्षेत्र में जिस श्री रामवाचक तारक मन्त्रराज का उच्चारण करते हुये प्राण त्याग करते हैं वे लोग उस सर्व वेद सारभूत सर्वशास्त्र वाच्य वेदान्त वाक्य तारक मन्त्रराज को श्रीशंकरजी के मुख से सुनकर तथा उसकी उपासना यानी अनुसन्धान करके विश्वनाथ यानी सर्वेश्वर सर्वनियन्ता मुझ श्रीराम को ही देखते या प्राप्त करते हैं यानी तारक मन्त्रराज के श्रवण से जीव वर्ग सायुज्ज प्राप्त कर लेते हैं ।६९।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



प्राप्यैनमाराध्य च मामनेन,
हिरण्यगर्भा मुनयोऽपि सप्त ।
ज्ञानं च मन्निष्ठमुपेत्य सम्यक्
दिवि प्रथन्ते मदनुग्रहेण ॥७०॥

अयं च मैत्रावरुणिर्विधातु
रस्मात्तृतीयो भविता स्वयम्भूः ।
व्यासश्च विष्णुर्भविता चतुर्थः
स्कन्दोमृडोऽस्मादपि शूलपाणेः ॥७१॥

मत्प्राप्त्युपायप्रथनार्थमेव,
ब्रह्माण एते बहवो नियुक्ताः ।

हे विष्णुजी ? ये हिरण्य गर्भा सात मुनिगण भी अच्छी तरह से मेरी आराधना करके मुझ से इस तारक मन्त्रराज को प्राप्त करके इसी मन्त्रराज के द्वारा ही मुझ में स्थित या मुझ सम्बन्धी ज्ञान को अच्छी तरह से प्राप्त कर यानी मेरे यथार्थ स्वरूप को जानकर मेरे ही अनुग्रह कृपा से आकाश में स्थित हो जाते हैं ॥७०॥

विष्णो ? ये मित्रावरुणनन्दन वसिष्ठ मेरी सृष्टि व्यवस्थानुसार इन ब्रह्मा से तीसरी पीढी में ब्रह्मा होंगे तथा ये व्यास चौथे विष्णु होंगे और ये स्कन्द इन त्रिशूलपाणि शिवजी के बाद शंकर होंगे ॥७१॥

हे मुरारि ? संसार में मेरी प्राप्ति के उपायों के प्रचार प्रसार कर जनोद्धार के लिये ये बहुत से ब्रह्मा नियुक्त हैं, तथा मेरे विशिष्ट वैभव या अनन्त ऐश्वर्य का संसार में बोधकराने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



यूयं च मद्वैभवबोधनार्थं,
रुद्रा मदाच्छादनहेतवे च ॥७२॥
वेदेष्वमी विश्वसृजः प्रधानाः,
यूयं च मुख्याः श्रुतिमस्तकेषु ।
सर्वेषु शास्त्रेषु तथागमेषु,
रुद्रा अमी मुख्यतमा भवन्ति ॥७३॥
ममैकांशे जगत्यस्मिन् प्रतिगोलमवस्थिताः ।
तत्तद्गुणाधिपतयो ब्रह्मविष्णुकपर्दिनः ॥७४॥
तत्राण्डकोशे चैतस्मिन्मुक्तकोशोऽयमात्मभूः ।
विष्णुः पालयिता चास्य त्वमण्डस्यामृतेश्वरः ॥७५॥

के लिये आप यानी अनन्त विष्णु नियत किये गये हैं और मेरे अनेकानेक विभव ऐश्वर्यादि के आच्छादन के लिये ये अनेक रुद्र नियत हैं ॥७२॥

हे विष्णुजी ? वेदों में ये मेरी आज्ञा से विश्व की सृष्टि करने वाले ब्रह्माजी प्रधान हैं तथा श्रुतिमस्तक यानी वेदाग्रभाग वेदान्त में आप प्रधान हैं और सभी शास्त्र और आगमों में ये रुद्र मुख्यतम माने जाते है ॥७३॥

विष्णो ? मेरे एक अंश मात्र इस जगत में सत्वगुण रजोगुण और तमोगुण के अधिपति विष्णुजी ब्रह्माजी तथा शंकरजी प्रत्येक गोलक में स्थित हैं तथा अपना अपना कार्य सृष्टि-पालन और संहार करते हैं ॥७४॥

मेरे एकांशभूत संसार के उन एक गोलकों के इस ब्रह्माण्ड में स्वयं भू ये ब्रह्माजी सृष्टि करते हैं और अमृतेश्वर-देवेश्वर विष्णु आप इस ब्रह्माण्ड का पालन कर्ता हो ॥७५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



रुद्रोऽप्यसावहिर्बुध्न्यः संहरिष्यति तत्पुनः ।
अस्य विश्वसृजः सर्गे भुवनानि चतुर्दशः ॥७६॥
भूमाविह त्वदंशोऽसावभूद्दशरथो नृपः ।
यत्रावतीर्णं मां सर्वे वदन्त्यजमपि प्रभुम् ॥७७॥
आदौ गुणानामधिपैर्भवद्भिरमरेश्वरैः ।
मयैव सृष्टैः क्रीडार्थं सृष्टिस्थित्यन्तकारणैः ॥७८॥
स्वेषु स्वेष्विह कल्पेषु तपस्तप्तं सुदारुणम्
अमूर्त्तेरपि मे नित्यं रूपस्यास्यदिदृक्षया ॥७९॥

ये अहिर्बुध्न्य रुद्रजी इस मदेकांश भूत संसार का उपसंहार करेंगे । इस विश्व स्रष्टा की सृष्टि में केवल चौदह भुवन मात्र हैं ॥७६॥

हे विष्णुजी ? इस भूतल पर तुम्हारा अंश ही इन राजा दशरथ के रूप में प्रकट हुआ है यद्यपि मैं अजन्मा सर्व समर्थ प्रभु हूं तथापि वेद शास्त्रादि सभी लोग उन्ही दशरथ के यहां ही मैं पूर्णरूपेण अवतीर्ण उत्पन्न हुआ हूं ऐसा बतलाते हैं ।७७।

मुरारे ? सृष्टि के प्रारम्भ में क्रीडा के लिये मैंने ही जिन आप सबों की संकल्प मात्र से सृष्टि की थी जो कि सृष्टि उत्पत्ति स्थिति पालन अन्त संहार के कारणभूत रजोगुण सत्वगुण तथा तमोगुणों के अधीश्वर रूप आप सब हैं ॥७८॥

उन्ही आपसबों ने अपने अपने कल्पों में नित्य निरवध्य रूप से रहने वाले अमूर्त्तस्वरूप मेरे इस दिव्यातिदिव्यरूपके दर्शन की इच्छा से सुदारुण-घोर तपश्चर्या की जिसके परिणाम स्वरूप आज आप सबों को मेरे इस अप्राकृतिक रूपका दर्शन हुआ ॥७९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



साकं भवद्भिर्गन्धर्वो विश्वावसुरपि स्वयम् ।
सहस्रसत्रैरिष्ट्वा मां सामशाखासहस्रवित् ॥८०॥
मामेव तोषयामास गायं गायं च सामभिः ।
निरूपमपि मां द्रष्टुं महामायाविमोहितः ॥८१॥
मर्त्यरूपमनेनापि वृत्तं तत्त्वमजानता ।
निवृत्तधर्मानुत्सृज्य काम्यकर्माणि कुर्वता ॥८२॥
राक्षसत्वमपि प्राप्तममूर्त्तेर्मूर्त्तिमिच्छता ।
मद्भक्तिलब्धयोगेन प्राप्स्यते च मदात्मताम् ॥८३॥

हे विष्णुजी ? आप लोगों के साथ ही साम वेद के सहस्र हजार शाखाओं का ज्ञाता विश्वावसुनाम के गन्धर्व ने भी स्वयं सहस्रों यज्ञों द्वारा मेरी ही आराधना करके ॥८०॥

बार बार साम मन्त्रों का सुन्दर गान करते हुये मुझ को ही सन्तुष्ट किया था कारण कि वह भी सामान्यतः निरूपतया अलक्ष्य गति से रहने वाले मेरा ही दर्शन करना चाहता था, पर उस समय उसकी बुद्धि को मेरी महामाया ने विमोहित कर दिया था क्योंकि वह तामस प्रधानतया सर्व कारण कारण रूप मुझे जानना चाहता था ॥८१॥

महामाया से मोहित होने के कारण निवृत्ति धर्मों का त्याग कर काम्य कर्मों का ही आचरण किया अतः तत्त्वों को जान न सकने के कारण उस गन्धर्वने मनुष्य रूप का वरण किया ॥८२॥

सामान्यतया अदर्शनीय तयास्थित मुझ सर्वेश्वर के निराकार रूप को हठात साकार रूप से देखने की इच्छा होने से उसे राक्षस योनि की भी प्राप्ति हो गई पर अब वह मेरी अमोघा भक्तियोग के प्रभाव से मदात्मता—मेरे सायुज्य रूप मुक्ति को प्राप्त कर लेगा ॥८३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



प्राप्तं चानेन निधनं मत्त एवान्यदुर्लभम् ।
रावणोऽयं महाबाहुर्मनुत्वमुपयास्यति ।
पुनरिन्द्रत्वमासाद्य भुक्ताभोगान्यथेप्सितान् ॥८४॥
गुरो तु वामदेवस्य नित्यं शुश्रूषणे रतः ।
कुशनाभ इतिख्यात ऋषित्वमुपयास्यति ॥८५॥
ऋषेरुद्दालकस्याथ पुत्रो योगविदांवरः ।
निवृत्तिधर्ममार्गमिष्ट्वा मत्सायुज्यमुपैष्यति ॥८६॥
मन्दरे गुरुणा शप्तः कण्वः सोऽयं विभीषणः ।
कृच्यादत्वमपि प्राप्यन् जहौ धर्ममनुत्तमम् ॥८७॥
ऐन्द्रं पदमनेनेह यावत्कल्पमभीरुणा ।

हे मुरारिजी ? इस रावण ने अन्य जनों से दुर्लभ निधन मृत्यु मुझ से ही प्राप्त किया है इसलिये यह महाबाहु रावण पहले इन्द्र की पदवी को प्राप्त कर यथेच्छ भोगों को भोग करके पुनः मनु के स्थान को प्राप्त करेगा ॥८४॥

अनन्तर यह उद्दालक ऋषि के पुत्र रूप में कुशनाभ नाम से विख्यात होगा जो गुरुदेव वामदेवजी की सेवामें नित्य सावधान तथा तत्पर रहने के फल स्वरूप ऋषि भाव को प्राप्त करेगा और अपने समय का श्रेष्ठ योगवेत्ता होगा तब निवृत्ति धर्म मार्ग से मेरी सेवा पूजा आराधना करके मेरी सायुज्य मुक्ति को प्राप्त कर जायगा ॥८५-८६॥

अभी मेरे शरणापन्न ये विभीषणजी मन्दराचल पर अपने गुरु से शापित वे ही कण्व ऋषि हैं शाप के प्रभाव से राक्षस योनि को प्राप्तकर अपने सनातन ऋषि धर्म को त्याग दिया ।८७।
मेरे अनुग्रह से अब ये विभीषण निर्भय होकर कल्प पर्यन्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



भोक्ष्यते मत्प्रसादेन मद्धाम प्राप्स्यते ततः ॥८८॥
यद्गोलेनैव भूर्नापस्त्रीणि भूतानि सर्वदा ।
शीतोऽग्निर्भीरुतस्तीव्रो ब्रह्माख्यस्य प्रजापतेः ॥८९॥
जायन्ते जन्तवो वन्हेः कामरूपा सुखोल्वणाः ।
व्योमगेहा वन्हिभुजो वायुभाजो मनोजवाः ॥९०॥
तत्रैकपादं यो रुद्रो हनूमान्मत्परायणः ।
द्वात्रिंशदर्बुदान्येव रुद्राणां पर्युपासते ॥९१॥
मद्भक्तिलब्धयोगस्तु मत्प्रसादाप्त वैभवः ।

इन्द्रपद का उपभोग करेंगे अनन्तर इन्हे मेरे दिव्यधाम श्रीसाकेत की प्राप्ति हो जायगी ॥८८॥

हे विष्णुजी ! जिस मुझ में अनन्त रूप से लगे गोलक अण्ड से ही पृथिवी जल तेज वायु तथा आकाश ये पांचभूत सर्वदा उत्पन्न होते हैं । उन प्रजापति ब्रह्मा के भय के कारण ही अति प्रचण्ड अग्नि शीतल हो जाती है ॥८९॥

तब उसी अग्नि से अनेक प्रकारक अनन्त जन्तु उत्पन्न होते हैं जो अपनी इच्छा के अनुसार रूपधारण करने में समर्थ होते हैं तथा उनका सुख भी सीमा रहित होता है । उन सर्वों का आकाश ही घर तथा वन्हि ही भोजन और वायु सेवी तथा मन के सदृश अतिवेग वाले होते हैं ॥९०॥

उन अनन्त जीवों में से अहिर्बुध्य नामक एक पाद वाले जो रुद्र हैं वे ही मेरे परायण यानी मेरी सेवा उपासना में सर्वदा तत्पर रहनेवाले हनुमान् हैं जिन श्रीहनुमानजीकी बत्तीस अर्बुद रुद्र उपासना करते है ॥९१॥

उन श्रीहनुमानजी को मेरा अतिदुर्लभ भक्ति योग उपलब्ध है तथा मेरे अनुग्रह से समस्त वैभव भी उन्हें प्राप्त है अतएव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



आपदुद्धरणश्चायं भजतां नात्र संशयः ॥९२॥
संग्रहेण प्रवक्ष्यामि गुह्यमन्यत् त ऽच्युत ? ।
येनविज्ञानमात्रेण छिद्यते संशयः स्वयम् ॥९३॥
येयं सीता महामाया शक्तिर्मे क्रीडतः सदा ।
भिन्नेव दृश्यतेऽभिन्ना जानीहि विश्वमेव ताम् ।९४।
कार्यकारणरूपेण येयमेका प्रवर्त्तते ।

उनका भजन करनेवाले जनों की आपत्तियों को दूर कर देते हैं इसमें कोई संशय नहीं है ॥९२॥

हे अच्युत ? अब मैं आपको एक दूसरा गुह्य रहस्य संक्षेप में बतलाता हूं जिसके जानने मात्र से ही सब संशय स्वत नाश हो जाता है ॥९३॥

हे विष्णो ? यह आप सर्वों के समक्ष सर्व शक्तियों की आदि कारण भूता महामायास्वरूपिणी सीता है वह मेरी ही स्वरूपा मुझ से कभी भी भिन्न न होने वाली पराशक्ति है । महर्षि श्रीवाल्मीकिजी ने श्रीमद्रामायण में लिखा है "अनन्या च मया सीता भास्करेण प्रभा यथा" अर्थात् सूर्य से सूर्य की प्रभा जैसे अलग नहीं हो सकती है वैसे ही सीता मुझ से सर्वथा अलग नहीं है । यह श्रीसीताजी मेरे जगत् व्यापार सृष्टि पालन तथा संहार रूप क्रीडा में भिन्न जैसी दीखती हैं पर है सर्वथा अभिन्न ही तथापि मेरी आज्ञानुसार श्रीसीताजी को विश्व के रूप में परिण होकर मेरे सभी कार्यों का सम्पादन करने वाली हैं ऐसा जानें ॥९४॥

अच्युत ? यह मेरी मुझ से सदा अभिन्न रहने वाली एकाकी शक्ति श्रीसीता ही कार्य तथा कारण अभिन्न निमित्तोपादान रूप से प्रवर्त्तते यानी संसार रूप से परिणत हो जाती है आप

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

# ॥ गीता जयन्ती ॥

[ले० दर्शन केसरी वैदेहीकान्तशरण]

मार्गशीर्ष (अग्रहण) शुक्ल एकादशी विश्व एवं विशेषकर भारतीयों के लिये बहुत ही महत्त्व का दिवस है। 'मासानां मार्ग शीर्षोऽहम्' कहकर भगवान् ने इस मास का गौरव प्रदर्शित किया ही है साथ ही इसी दिन महाभारत के धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र युद्धक्षेत्र मेंशुक्ल हृदय अर्जुन को ज्ञानामृत श्रीमद्भगवद्गीता का उपदेश किया था। इसलिए यह श्रीमद्भगवद्गीता जयन्ती नाम से प्रख्यात है।

इस पुण्य अवसर पर भारतीय लोग उत्सव मनाते हैं। और विद्वान् लोग श्रीमद्भगवद्गीता पर प्रवचन, वाद या विवाद का आयोजन करते हैं। प्रवचन से वाद और फिर कहीं विवाद का प्रकरण बनता है जिसमें विजेता को पुरस्कार और पदक भी प्राप्त होता है।

गत वर्ष "यत्र योगेश्वरः कृष्णः यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्री र्विजयोभूति र्ध्रुवा नीति र्मतिर्मम ॥" श्लोक पर शास्त्रार्थ हो चुका था और पदक विजयानन्दजी को प्राप्त हुआ था। इस वर्ष—"सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टः मत्तः स्मृतिर्ज्ञान मपोहनञ्च। वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्त कृत् वेद विदेव चाहम ॥" श्लोक पर वाद आरम्भ हुआ। परन्तु वाद के लिये आवश्यक है कि वादी और प्रतिवादी हों और दोनों एक अधिकरण में परस्पर विरुद्ध धर्मों को आरोपित करें। प्रथम तो उक्त श्लोक का साधारण (सामान्य) अर्थ सभाध्यक्ष ने कहा— "अहं (मैं) सर्वस्य (सभी के) हृदि (हृदय में) सन्निविष्टः (स्थित हूं) च (तथा) मत्तः (मुझ से) स्मृतिम् (स्मरण) ज्ञानम् (जानना) अपोहनं (वितर्क) होता है। वेदैश्च (और वेदों के द्वारा) अहमेव (मैं ही) वेद्यः (जानने योग्य) हूं। च (तथा) वेदान्त कृत् (वेदान्त का कर्ता) च (और) वेद विदेव (वेद को जानने वाला

Nepal Sanskrit University, Balmiki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



भी) अहम् (मैं) हूं ।" फिर क्या था, अहं ब्रह्मास्मि का अहं कार रखने वाले अहंकारानन्द ने कहा—इस श्लोक में कथित अहं पद अहं सुखी 'अहं दुःखी अहं स्मरामि अहं जानामि' का प्रत्यक्ष अनुभव करने वाला आत्मा है यह अहं प्रत्यय ही आत्मा का अस्तित्वका प्रत्यक्ष प्रमाण है । आत्मा प्रत्यक्षमात्र गोचर है । वैशेषिक सूत्र ने भी कहा है—"तत्रात्मामनश्चाप्रत्यक्षे ८।१।२, आत्मन्यात्मनसोः संयोग विशेषात्म प्रत्यक्षम्—५।१।११ "यह अहं पद वाच्य आत्म सभों के हृदय में स्थित है और उसी के द्वारा स्मृति, ज्ञान एवं अपोहन होता है ।" इसका प्रतिपाद करते हुए पं. जीवानन्दजी ने कहा—नहीं, यहां अहं पद वाच्य आत्मा (जीवात्मा) नहीं है और नहीं हो सकता है, प्रत्युत यह अहं पद वाच्य 'भगवान् (ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः । ज्ञान वैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणम् ।। उत्पत्तिं प्रलयं चैव भूतानामागतिंगतिम् । वेत्ति विद्यामविद्याञ्च सवाच्यो भगवानिति ।।) हैं, जिन्हें श्लोक के अध्याय के आरम्भ में ही स्पष्ट "श्री भगवानुवाच" शब्द से निरुपित किया गया है । यहां जीवात्मा को स्मृति ज्ञान अपोहन होता है । और परमात्मा के द्वारा स्मृति ज्ञान अपोहन होता है पञ्चमी हेतु द्वार या उपादान अर्थ में परमात्मा में है जीवात्मा में है, यहां फलाश्रयत्व वा कर्मत्व ही जीवात्मा में है । न्याय दर्शन ने भी ज्ञानाधिकरणमात्मा । स द्विविधः—जीवात्मा परमात्माचेति । तत्रेश्वरः सर्वज्ञः परमात्मा एक एव, जीवस्तु प्रति शरीरं भिन्नो विभुर्नित्यश्च ।" कह कर जीवात्मा एवं परमात्मा में अन्तर माना है तथा 'समवाय सम्बन्धेन नित्य ज्ञानवान् ईश्वरः । जीवत्वं च समवायेन जन्यज्ञानाधिकरणत्वम्" कहा है । अतः यहां अहं पद वाच्य आप अहं पद वाच्य आप अहंकारानन्द नहीं है प्रत्युत परमात्मा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



है । यह तो आप का वृथा अहंकार है कि अपने को ब्रह्म मानते हैं 'जीव कि ईश सब' आप लोग 'ईश्वरोऽहमहं भोगी गी १६।१४' का अहंकार कर अपना परलोक व्यर्थ नहीं बिगाड़ें पं. जीवानन्द के प्रतिवाह पर अहंकारानन्द का अहंकार चूर हो गया । वे चुप हो गये । पं. विशेषानन्दजी ने देखा कि पं. जीवानन्द ने बाजी मारली । वे भी जीवानन्दजी के ही पक्षधर थे । परन्तु बाजी मारने की बात थी । प्रति पक्ष के लिये पूर्ण विरोध ही आवश्यक नहीं है, आंशिक विरोध ही होता है और वह भी प्रतिपक्ष बन सकता है' सामान्य और विशेष का विरोध इसी प्रकार का है । अतएव 'व्यावर्तका विशेषाः' को स्मरण कर अपने नाम को सार्थक करते हुये बोले—यह सत्य है कि यहां अहं पद वाच्य जीवात्मा नहीं है और यह भी सत्य है कि यहां अहं पद वाच्य सामान्य रूप से श्लोक के वक्ता भगवान ही हैं । परन्तु इतना ही से तत्त्व का पूर्ण प्रतिपादन नहीं होता और वक्ता का अभिप्रायी विषयत्व या तात्पर्य प्रकट नहीं होता । यहां अहं पद वाच्य सामान्य भगवान् नहीं है प्रत्युत श्लोक के चतुर्थ चरण में निरूपित 'वेदान्त कृत वेदविद्' विशेष भगवान् हैं । कारण गुण ही कार्य में अनुगत होता है । वेदान्त कर्ता और वेद विद् ज्ञानरूप भगवान् ही स्मृति ज्ञान अपोहन कार्य के कारण है । पुनः ज्ञानादि की जनिका प्रकृति भी हो सकती है- "सत्त्वात् संजायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च । प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥१४।१७॥" परन्तु यहां प्रकृति अभीष्ट नहीं है । अतः श्री जीवानन्दजी को इसका प्रत्याख्यान भी करना चाहिए था । सर्वानन्दजी ने कहा—सर्वप्रथम श्लोक में 'सर्व' पद पठित है 'सर्वस्यचाऽहम्' । अतः प्रथम सर्व पद की व्याख्या होना अपेक्षित था तब अहम् पद की । अहंकारानन्द

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



ने अहंकार प्रमाद मोह या तमस में प्रथम अहम् पद की ही व्याख्या आरम्भ कर दी। जो व्यतिक्रम दोष है। यहां 'सर्वस्य हृदि सन्निविष्टः' में पठित सर्व शब्द में न केवल सभी जीवात्मा अपितु प्रकृति का भी ग्रहण है। 'मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्' 'आत्मन्सर्व भूतानि यन्त्रा रूढानि मायया" आदि से भगवान प्रकृति के भी प्रेरक अथवा प्रकृति प्रेरक हैं। प्रकृति या तो फलाश्रय कर्म है या करण (यदुव्यापाराव्यवधानेन ये निष्पत्तिस्तत्करणम्) है। कर्तृत्व क्रिया सम्पादकत्व या वास्तविक व्यापाराश्रयत्व तो भगवान् में ही है। यहाँ सर्व पद से सर्वमखिलम्' का ग्रहण है। पं. निःशेषानन्द ने इसकी पुष्ट करते हुये कहा कि सर्व का अर्थ निः शेष (सर्वम् निः शेषम्) होता है। अतः कुछ भी बाकी नहीं बचता। प्रकृति भी उसके अन्तर्गत ही चली आती है। परन्तु पं शेषानन्दजी को यह बात नहीं जंची। उन्होंने प्रतिवाद करते हुये कहा कि- नहीं, 'उत्सर्गाः सापवादाः' नियम में भी अपवाद होता है— 'अतिउच्चैः पतनम्' परन्तु 'ध्रुवे तस्य व्यभिचारः'। सभी अति उच्च वालों का पतन होता है परन्तु ध्रुव में इस नियम का व्यभिचार है अर्थात् ध्रुव का पतन नहीं होता। इसी प्रकार यहाँ 'सर्व' पद से प्रथम दृष्ट्या ही परमात्मा' छंट जाता है। यदि सर्व पद से यहां परमात्मा का भी ग्रहण किया जाय तो परमात्मा के हृदय में परमात्मा यह आत्माश्रय दोष होगा। पुनः परमात्मा के द्वारा परमात्मा के हृदय में स्मृति ज्ञान अपोहन की उत्पत्ति होने से परमात्मा जन्यज्ञानवान् हो जायगा, जबकि न्याय उन्हें नित्यज्ञानवान् एवं वेदान्त उन्हें ज्ञानस्वरूप (प्रज्ञानं ब्रह्म) मानता है। अतः यहां पर पठित सर्व पद परमात्मा व्यतिरिक्त का बोधक है, परमात्मा का भी नहीं, पुनः अचित् पाषाणादि को हृदय ही नहीं होता है। अतः उसका वाचक भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



सर्व पद नहीं है। पाषाण ही नहीं अपितु पाषाण के समान कठोर हृदय का भी इससे ग्रहण नहीं होता। क्योंकि उसमें ज्ञान का प्रवेश ही नहीं हो सकता। न्यायाचार्य श्री उदयनाचार्य ने स्पष्ट कहा है– "इत्येवं श्रुति नीति सम्बलव जलैर्भूयोभिराक्षालिते, येषां नास्पदमादधासि हृदये ते शैल साराशयाः न्या.कु. ५।१५॥" अर्थात्–पांच स्तवकों में अति विस्तृतरूप से उपपत्ति पूर्ण प्रतिपादित श्रुति वेद और नीति न्याय के ज्ञान रूपी प्रचुर जल से धोने पर भी पाषाण कठोर हृदय में (ईश्वर) ज्ञान नहीं होता है। अतः ऐसे हृदयों का भी उक्त सर्व पद से ग्रहण नहीं होता और यहाँ सर्व पर निःशेष बोधक नहीं प्रत्युत शेष बोधक है। पं शेषानन्द की आपत्ति पं निःशेषानन्द को नहीं जंची। जंचती भी कैसे? एक तो उसे मान लेने पर उनका पराजय होता दूसरे उनके नामों शेषानन्द एवं निः शेषानन्द में भी परस्पर विरोध था। अतः "वाक्यशेषात्"–का उद्घोष करते हुये बोले–नहीं, उदयनाचार्यजी ने उसी श्लोक के शेष चरण में कहा है–"किन्तु प्रस्तुत विप्रतीप विधयोऽप्युच्चैर्भवाचिन्तकाः काले कारुणिक स्वयैव कृपया ते तारणीया नराः ॥५।१७॥" अर्थात्–उन पाषाण हृदयों में ज्ञानाभाव नहीं होता प्रत्युत वे विपरीत विधि (प्रक्रिया) से अत्यन्त उच्च चिन्तक (स्मरण करने वाले विचार करने वाले) हैं। 'शेषे षष्ठी' अर्थात् क्रियान्वयि कारकम्। कर्ता कर्म च करणं च सम्प्रदानं तथैव च' आपादानमाधिकरणञ्च इत्याहुः कारकाणिषट् ॥' के प्रयोग से जो शेष बच जाता है उसमें क्रिया में अनन्वयी शेष बचे हुये में ही षष्ठी होती है एवम् 'शेषस्तु परार्थत्वात्–मी.सू.' के अनुसार जो परार्थ (दूसरे के लिये) होता है उसी पराश्रित को शेष कहते हैं। शेषानन्दजी भी इन्हीं अर्थों में अपने नाम को सार्थक करने चले हैं। इस प्रकार दोनों में शेष-निःशेष पर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



बहुत देर तक नोक झोंक होती रही। तब समर्थोऽधिकृतोऽध्यक्षः ने नियमन करते हुये व्यवस्था दी कि आप दोनों व्यक्ति प्रकरण बाह्य, असङ्गति पूर्ण, विषय विरुद्ध व्यक्तिगत आक्षेप प्रत्याक्षेप करने लगे। अतः निरर्थक बातों के लिये पराजित घोषित किये गये। फिर क्या था? पं. हृदयानन्द शास्त्रार्थ के मैदान में आगे उतर आये और बोले–'प्रकृत साध्य वा विषय ज्ञान है और उसका अधिकरण (आधारोऽधिकरणम्' हृदय है। फिर उस मूल आधार को छोडकर निराधार आप लोग विवाद कर रहे हैं? प्रथम 'हृदय' पर विचार करना चाहिए था। जब तक ज्ञान का आश्रय हृदय का प्रतिपादन नहीं हो जाता है, तब तक आपका विचार 'गगनारविन्दं सुरभि, अरविन्दत्वात् सरोजारविन्द वत्' के समान आश्रयसिद्ध (यस्य हेतोरश्रयो नावगम्यते स आश्रयासिद्धः) ही होगा अतः सर्व प्रथम आश्रय 'हृदि' की व्याख्या करना चाहिए और मैं सर्व प्रथम इसी की व्याख्या करता हूं– शब्दकोशानुसार हृत या हृदय के पर्याय अपरनाम "चित्तं तु चेतो हृदयं स्वान्तं हृन्मानसं मनः–अ.को. १।४।३१" हैं। जिनके अर्थ चित्ते चिती संज्ञाने, चिति स्मृत्याम, चित संचेतने" धात्वर्थ के परिप्रेक्ष्य में अवगत होते हैं। इसी प्रकार हृदय प्रसहा करणे+दान गति रक्षण हिंसादानेषु, आदानं ग्रहणम्। हृव्क हरणा प्रापणं स्वीकारः स्तेयं नाशनं च हृष तुष्टौ।), स्वात्स (स्वान्तं चेतसि गह्वरे–मे. अन्तः स्वीकार मध्ययोः) मानस मानस सरसि स्वान्ते रभसो वेग हर्षयोः–मे.' मन (मनस् चित्ते मनीषायाम–मे०, मन ज्ञाने, मनु अवबोधने, मन्यते अनेन इति मनः। साक्षात्कारे सुखादीनां करणं मन उच्यते मनः सर्वेन्द्रिय प्रवर्तकम्। आन्तरिन्द्रिय स्वसंयोगेन बाह्येन्द्रियानुग्राहकम् अतएव सर्वोपलब्धिकारणम्। मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः॥) आदि भी समझा जा सकता है। इसको यहां न केवल परमात्मा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



अपितु उससे जन्य स्मृति ज्ञान अपोहन का आधार (आधारोऽधिकरणम् । अधिक्रियतेऽस्मिन्नत्यधिकरणम् आधारः) के रूप में सप्तमी विभक्ति में निरूपित प्रयुक्त किया गया है । सप्तम्यन्त पद कारण वा हेतु के रूप में भी प्रयुक्त होता है–'पञ्चम्यन्तं सप्तम्यन्तान्यतरलिङ्ग बोधक वचन प्रयोगेः हेतुः–प्रतिबिम्ब लिङ्ग ज्ञानं हेतु प्रयोजनम्–त.सं.दी. । अतः यहां हेतु एवं कारण कार्य बोध के लिये भी सप्तमी प्रयोग है । इसके अतिरिक्त 'हृदय सिन्धु मति सीप समाना' कहकर हृदय को समुद्र शब्द से भी निरूपित किया गया है । समुद्र शब्द का निर्वचन करते हुये निरुक्तकार यास्क ने कहा है–'समुद्रः कस्मात् ? समुद्र द्रवन्त्यस्मादापः, समभिद्रवन्त्येनमापः, सम्मोदन्तेऽस्मिन्भूतानि, समुद्रको भवति समुनत्तीति वा ।' समुद्र संज्ञा कैसे है ? तो, समुद्र से जल तरंगा के रूप में ऊपर की ओर उठता है एवं समरूप से सर्वत्र फैलता है, समुद्र को सभी ओर से नदियों (सरिताओं) द्वारा मिलता है (समुद्रायेव सिन्धवः) एवं समुद्र में सभी प्राणी आनन्दित होते है, एवं सम्मान जल से पूर्ण रहता है एवं जल से भिगता है सरस करता है । हृदय में भी समुद्र शब्दोक्त ये सभी लक्षण घटित होते हैं । इसमें भी विचारों एवं भावनाओं एवं कल्पनाओं के असंख्य अनन्त तरंग उठते और विलीन होते रहते हैं । इसमें भी सभी प्राणियों के विचारादि प्रवेश करते और मिलते रहते हैं । इसमें भी सभी प्राणी आनन्दित रहते हैं । यह भी विचार, भावना, ज्ञान, प्रेम आदि जल से परिपूर्ण रहता है (श्रुति नीति समप्लवजल–न्या. कु.५।१७' प्रेमाम्बु पूरं– रा.च. मानस) । यह भी अपने स्नेह सुधा रस से सभी विशेषकर सुहृदों को सिक्त करता है । अतः हृदय का नाम समुद्र उपपन्न है । परन्तु यह सब तो सामान्य रूप से हृदय पर विचार किया गया । यहां श्रीमद्भगवद्गीता में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF


प्रयुक्त इस 'हृदि' पद की व्याख्या में गीताग्रन्थ में अन्यत्र प्रयुक्त हृदि शब्द के प्रकरणों के अनुसार विशेष व्याख्या अपेक्षित है ॥ श्रीमद्भगवद्गीता में अन्यत्र "तस्मादज्ञानसंभूतं हृत्स्थं ज्ञानसिनात्मन' 'छित्त्वैनं संशयं येन मातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥४।४२॥ ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते । ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानेगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम ॥१३।१७॥ ईश्वरः सर्व भूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति । भ्रामयन्सर्व भूतानि यन्त्रारुढानि मायया ॥१८।७१॥" में हृदय का ज्ञान से साहचर्य एवं सम्बन्ध प्रतिपादित किया गया है । उपनिषदों में भी–'भिद्यते हृदय ग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व संशयाः । क्षीयन्ते चास्यकर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ॥मुण्डक २।२।८॥" "स व एषोऽन्तर्हृदय आकाशः तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः, अमृतो हिरण्मयः ॥ तैत्तिरीय-उ.॥" शतंचैका हृदयस्य नाड्यास्तासां मूर्धानमभि निस्सृतैका । तयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति ॥ २।३।१६॥" में हृदय की महत्ता निरूपित है इस प्रकार हृदि सन्निविष्टः' कहने का विशेष प्रयोजन और महत्त्व है । अब 'सन्निविष्टः' क्रियापद का विधेय वाक्य में 'सम्' इत्येकीभावम् (निरुक्त), सम् कल्याणे सुखे सन्तु शोभनार्थ समर्थयोः–मे०+नि निवेश भृशार्थयोः नित्यर्थ संशय क्षेम कौशल्यो परमेषु च+वि विनिग्रहे नियोगे च तथैव पादपूरणे । निश्चयेऽसहने हेतावव्याप्ति विनियोगयोः । इवर्थे परिभवे शुद्धावालम्बनेऽपि च । विज्ञने'–मे०' । 'वि' सम् इत्येकीभावम् 'वि' इत्येतत्य प्रतिलोम्यम् (निरुक्त)' +ष्टै वेष्टने (वा. ष्ठा गति निवृत्तौ)' के विविध अर्थों की कल्पना से अर्थ एवं तत्त्व का निर्धारण होता है । फिर क्या था, पं. स्मृत्यानन्दजी ने 'भक्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनञ्च' की व्याख्या आरम्भ कर दी । सामान्य रूप से स्मृति पद 'स्याच्चिन्ता स्मृतिरध्यान्मुत्कण्ठोत्कालिके समे–अ.को.१।७।२७' स्मृ आध्यायने, आध्यायनं उत्कण्ठा पूर्वक स्मरणम्, स्मृ चिन्तायाम्

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



स्मृ प्रीतिपालनयोः, प्रीति चलनयो इत्यन्ये, चलनं जीवनम्' स्मृति धर्म शास्त्र स्मरणयो स्त्रियाम् मे०, स्मृतिस्तु, धर्म संहिता अ.को. १।६।६, संस्कार जन्यज्ञानम् स्मृतिः-त.सं. ॥" का प्रतिपादक है। परन्तु विशेष रूप से यहां गीता में अन्यत्र पठित "स्मृति र्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत १८।७५, 'अहम्...स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा-१०।३४' 'स्मृति भ्रंशात् बुद्धि नाशो २।...' से ज्ञानका उपादान है। पश्चात्य मनो विज्ञानुमार मन के दो गुण हैं ज्ञान को उपलब्ध करना और उसे ग्रहण कर अपने में रखना इसी द्वितीय गुण को स्मृति कहते हैं। पं. न्यायानन्दजी बीच में टपकते हुये बोले स्मृति का कारण ईश्वर नहीं है, प्रत्युत 'प्रणिधाननिबन्धाभ्यासलिङ्ग लक्षण सादृश्य परिग्रहा श्रयाश्रित सम्बन्धानन्तर्य वियोगैकंकार्म विरोधातिशय प्राप्ति व्यवधान सुख दुःखेच्छाद्वेषभयार्थित्व क्रिया रागधर्माऽधर्म निमेत्तेभ्यः— न्या.सू.३।२।४४' में कथित इन सत्ताइस निमित्तों से स्मृति होती है। पं. स्मृत्यानन्द ने समाधान करते हुये कहा कि ये सत्ताइस स्मृति के निमित्त (करण) हैं, मूल कारण नहीं' सूत्र में भी इन्हें निमित्त ही कहा कहा है। पुनः वे इसी जन्म के ज्ञातों का स्मारक है परन्तु ईश्वर स्मृति शक्ति उपादान कारण है और उसके द्वारा पूर्व जन्म जन्मान्तरों की बातों की स्मृति होती है। वह अलौकिक स्मृति का कारण है। अब ज्ञानानन्द की बारी आयी, उन्होंने ज्ञाम की व्याख्या करते हुये कहा "बुद्धिरूपलब्धि ज्ञानं प्रत्यय इति पर्यायाः वै उ. के अनुसार ये पर्याय हैं और 'सर्वव्यवहार हेतुर्ज्ञानं बुद्धि त.सं.' कहा गया है। ज्ञा अवबोधने, मनज्ञाने, बुध अवगमने, विदज्ञाने आदि धात्वर्थो से ज्ञान की व्याख्या की जाती है। परन्तु यह सामान्य लौकिक ज्ञान की सामान्य व्याख्या है। ये लौकिक ज्ञान इन्द्रियजन्य हैं। यहाँ ईश्वर द्वारा ज्ञान की उत्पत्ति के प्रकरण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



में श्रीमद्भगवद्गीता में अन्यत्र प्रोक्त ज्ञान विशेष का तात्पर्य है जो ,'क्षेत्र क्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम–१३।२' है और उसका पूरा वर्णन–"महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च । इन्द्रियाणी दशैकं च पञ्च चेन्द्रिय गोचराः ॥ इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतना धृतिः । एतत्क्षेत्रं समासेन सविकार मुदाहृतम् ॥ अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् । आचार्यो पासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥ इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च । जन्म मृत्यु जराव्याधिदुःख दोषानुदर्शनम् ॥ असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदार गृहादिषु । नित्यं च समचित्तत्व मिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ मयि चानन्य योगेन भक्ति रव्यभिचारिणी । विविक्त देश से वित्वमरतिर्जन संसदि ॥ अध्यात्मज्ञान नित्यत्वं तत्त्व ज्ञानार्थ दर्शनम् । एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥ इत्यादि श्लोकों में किया गया है । संक्षेप में यहां ज्ञान शब्द से तत्त्वज्ञान' और ज्ञान नेत्र (ज्ञान चक्षुषा–१३।२४) का तात्पर्य है वह ज्ञान ज्ञेय और ज्ञान गम्य परमात्मा हृदय में रहता है– "ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमः परमुच्यते । ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥ १३।१८॥ यहां ज्ञान का तात्पर्य पूर्ण ज्ञ न ज्ञ नंतेऽहं सविज्ञान मिदं वक्ष्याम्यशतः । यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्य ज्ज्ञातव्यमवशिष्यते ॥७।२॥७ से है । पं. न्यायानन्दजी ने भी समर्थन करते हुये कहा कि वास्तविक ज्ञ न तत्त्वज्ञान ही है और न्याय तथा वैशेषिक दर्शनों ने भी ज्ञान से ही मोक्ष माना है– "प्रमाण प्रमेय संशय प्रयोजन दृष्टान्त सिद्धान्ता वयवतर्क निर्णय वादजल्प वितण्डा हेत्वाभास छल जाति निग्रह स्थानानां तत्त्व-ज्ञानान्निश्रेयसाधिगमः ॥ न्या.सू. १।१।७ दोष निमित्तानां तत्व ज्ञानादहङ्कारनिवृत्तिः–४।२।१, मिथ्योपलब्धि विनाशस्तत्त्वज्ञाना-त्स्वप्नविषयाभिमान प्रणाशवत्प्रति बोधेः ॥४।२।३५॥" वैशेष

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF


षिक भी–धर्म विशेष प्रसुतद् द्रव्य, गुण कर्म, सामान्य विशेष समवायानां पदार्थानां साधर्म्य वैधर्म्याभ्यां तत्त्वज्ञानान्निः श्रेयसम् ॥ वै. सू. १।१।२॥ कहा है। पं. ज्ञानानन्दजी व्याख्या को आगे बढाते हुये बोले—आत्मा का जो धर्मभूत ज्ञान है उसको माया अपहृत कर लेती है (माययाप्रहृतज्ञाना ७।१५) अज्ञान से ज्ञान ढका हुआ है (अज्ञानेनावृतं ज्ञनं तेन मुह्यन्ति (५।१५) ईश्वर द्वारा प्रदत्त ज्ञान से वह अज्ञान नष्ट हो जाता है (ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः। तेषामादित्य वज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम् ॥५।१६॥) सम्पूर्ण श्रीमद्भवद्गीता में विस्तार से तत्त्व ज्ञान का निरूपण है। 'अपोहनञ्च' की व्याख्या करते हुये बोले "अविज्ञाततत्त्वेऽर्थे कारणोपपत्तिस्तत्त्व ज्ञानार्थमूहस्तर्कः–न्या.सू. १।१।४३, ऊह वितर्कः। संशयोत्तरमनिर्णये ऊहो वितर्कः अ. प्रदीप। वितर्कं च पुनान् ऊहे संशये च निगद्यते मे० आदि "ऊह" का अर्थ है। इसके पूर्व प्रयुक्त 'अप' उपसर्ग का 'सम्' इत्येकीभावम् 'वि' 'अप' इत्येतस्य प्रति लोम्यम् निरुक्त ॥ 'अपस्यांदप कृष्टार्थे वर्जनार्थ वियोगयोः मे०। "अर्थ है। यहां भगवान् से उत्पन्न अहन के साथ प्रयुक्त अप उपसर्ग का अथ अपकृष्ट नहीं हो सकता क्योंकि भगवान् अपकृष्ट नहीं हैं औ उनसे अपकृष्ट प्रकारक ऊहन नहीं हो सकता। अतः यहाँ ऊहन वितर्क संशय आदि के 'वर्जन' या 'वियोग' (निराकरण, समाधान) अर्थ ही गृहीत होगा। अर्थात् या तो ऊहन (वितर्क, संशय) का वर्जन याने उत्पत्ति ही नहीं होती है या उत्पत्ति हो गयी रहती है तो उसका वियोग (त्याग निराकरण समाधान) हो जाता है। समूहन का अर्थ वितर्क के अनुकूल व्यापार एवं अपोहन का अर्थ वितर्क के प्रतिकूल व्यापार है अर्थात् संशय विपर्यय वितर्क आदि दोषों को निराकरण करने का नाम अपोहन है, न कि अपकृष्ट वितर्क संशय वितर्क आदि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



का नाम यहाँ अपोहन है । इसप्रकार विशेष प्रकारक स्मृति, ज्ञान और अपोहन ईश्वर से ही उत्पन्न होता है । प्रथम चरण 'सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टः' में भगवान् ने सभी के हृदय प्रदेशों में अपनी व्याप्ति. स्थिति और सत्ता का निरूपण किया है और दूसरे चरण 'मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनञ्च' में उसके कार्य स्मृति ज्ञान अपोहन की उत्पत्ति प्रतिपादित किया है । अब तृतीय चरण 'वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः' में उस सभी वेदों (ज्ञानों) का विषय वेद्य ईश्वर को ही बतलाया है । विद् ज्ञाने धातु से निष्पन्न वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है । यह सुनकर पं. वेदानन्दजी ने अपने कान खडे किये और बोले–यद्यपि वेद शब्द का अर्थ ज्ञान होता है और वेद ज्ञान ही है तथापि ज्ञान व्यापक और वेद व्याप्य होने से सभी वेद ज्ञान हैं किन्तु सभी ज्ञान वेद नहीं है । 'ब्रह्म तत्त्वतपो वेदे–मे०' के अनुसार ऋग्यजुः साम अथर्व का नाम वेद है और वेद का अपर नाम ब्रह्म है । यहां वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्य । में वेद का अर्थ सामान्य ज्ञान नही प्रत्युत वेद ग्रन्थ प्रतिपादित विशेष ज्ञान है । सभी वेदों के वेद्य विषय हम परमेश्वर ही है । वेदो ने परमेश्वर को ही वेद्य 'भूतं भव्यं भविष्यञ्च सर्वं वेदात्त्रसिद्ध्यति–मनु० । 'प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुद्ध्यते । एनं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता । सायणाचार्य' मीमांसा सूत्र में भी कहा गया है वेद से मनुष्य विवेचन करता है (तदर्थशास्त्रात्–१।१।३१) बुद्धि को देने वाला शास्त्र वेद ही है (बुद्धशास्त्रात्–१।१।३३) उसमें परम विज्ञान है (सतः परम विज्ञानम्–१।१।४९) धर्म में वेद ही प्रमाण है (धर्मस्य शब्द मूलत्वाशब्दमनपेक्ष्यं स्यात्–१।३।१ वेदोऽखिलोधर्ममूलम्–मनु०) सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक् । वेद शब्देभ्य एवादौ पृथक्संस्थाश्च निर्ममे ।।मनु०।।'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



वाक्यं द्विविधं वैदिकं लौकिकञ्चेति । वैदिकमीश्वरोक्तत्वात् सर्वं मेव प्रमाणम् । त. सं. ।' उस वेद का ज्ञातव्य विषय वेद्य परमेश्वर ही है अन्य कोई नहीं यही भाव ईश्वर वाचक अहार पद के साथ इतर व्यावर्तक 'एव' पद के प्रयोग से निरूपित किया है । यदि वेद में अन्य विषय भी हैं तो वे गौण हैं और उनका प्रयोजन ईश्वर ज्ञान में सहयोगी रूप में ही है प्रधान रूप में नहीं है यदि इस एव पद का अन्वय अहम् पद के स्थान पर 'वेदैश्च सर्वैः' के साथ किया जाय 'वेदैश्च सर्वैः एव अहम् वेद्य' तो इसका भाव होगा कि परमेश्वर केवल सभी वेदों से ही वेद्य है अन्य किसी प्रमाण से नहीं । ऐसा ही ज. गु. श्रीपूर्णानन्दाचार्यजी ने श्रीबोधायन मतादर्श में निरूपण किया है– "ब्रह्म सत्वे प्रमाणं च शास्त्रमेव सुनिश्चितम् । तन्त्वौपनिषदं चैतच्छ्रुति वाक्य प्रमाणतः" १३१ । श्लोक के चतुर्थ चरण 'वेदान्तकृत वेद विदेव चाहम्' में वेदान्त शब्द का सामान्य अर्थ है वेद का अन्त । परन्तु विशेष रूप में इसका अर्थ उपनिषद् कहा जाता है– वेदान्तो नाम उपनिषद्' उपनिषद् को वेदान्त कहने के दो कारण है प्रथम वेदों के क्रमिक रूप से चार भाग माने जाते हैं संहिता ब्राह्मण आरण्यक और उपनिषद् प्रत्येक उपनिषद् संहिता के ही भाग और अन्तिम भाग माने जाते हैं । इस प्रकार वेदों का अन्तिम भाग या अन्त होने से उपनिषद् वेदान्त कहे जाते हैं । उपनिषदों की गणना क्रम में प्रथम उपनिषद् ईशावास्योपनिषद् है और वह शुक्ल यजुर्वेद (संहिता) का अन्तिम अध्याय (चालीशवां अध्याय) है । इस प्रकार इसका वेद का अन्तिम भाग वा अन्त होना स्पष्ट है एतावता उपनिषदों का नाम वेदान्त है । दूसरे वेद का अन्त निर्णय निश्चय प्रयोजन लक्ष्य प्रमाणफल उपपत्ति वेद्य कहा है और इसका मुख्यरूप से निरूपण उपनि-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



षदों में हुआ है । इसलिए उपनिषद् को प्रधान रूप से वेदान्त कहा जाता है । अन्तः का अर्थ अन्तस्थ गूढ़, गुप्त रहस्य आदि भी है । उपनिषद् वेदों के रहस्यों का ज्ञापक है । अतः इसे वेदान्त कहा जाता है । श्रीमद्भगवद्गीता भी उपनिषदों का ही सार है 'सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल नन्दनः । पार्थोवत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीताऽमृतं महत् ॥' ब्रह्मसूत्र का आधार भी उपनिषद् वाक्य है । इसप्रकार वेदान्त का प्रस्थानत्रयी मुख्य रूप से उपनिषद् होने से उपनिषद् को वेदान्त कहा गया है । वेदान्त शब्द के विषय में आनन्दभाष्यसिंहासनासीन जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी लिखते हैं—'तदत्र वेदान्त शब्देन च वेद वेदान्त भागेशावाश्य श्रीरामतापनीयो पनिषत्प्रभृति प्रमाणभूत वैयासिक ब्रह्मसूत्राणां तद्व्याख्यानपर श्रीबोधायन वृत्ति श्रीआनन्दभाष्यमेवं तन्मतपोषणपरक वेदार्थचन्द्रिका तत्त्वत्रय सिद्धि तत्त्वदीप प्रभृति वेदानुकूल व्याख्या ग्रन्थानां बोधो जायते (जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यः ।५।) इस की आप की ही विजय पताका यों है—यह यहां आवश्यकतया जान लेना चहिये कि वेदान्त शब्द से वेद एवं वेदान्त वेद का अन्तभाग यानी ज्ञान काण्ड के रूप मे प्रसिद्ध ईशावास्योपनिषद् श्रीरामतापनीयोपनि षद् प्रभृति सभी उपनिषद् शास्त्रों को प्रधान आधार मानकर उनमें आपाततः विरुद्धतया भासित होने वाले विषयों को पर ब्रह्म श्रीरामजी में समन्वय रूप से बादरायण श्रीव्यासजी से रचित ब्रह्मसूत्रों का एवं सूत्रों की व्याख्या श्रीबोधायन वृत्ति तथा श्री आनन्दभाष्य एवं भाष्य मत के पोषक अध्यामध्वंसलेश वेदार्थ चन्द्रिका तत्त्वत्रयसिद्धि तत्त्वदीप प्रभृति वेद एवं पूर्वाचार्य प्रयन्धों के अनुकूल व्याख्या ग्रन्थों का बोध होता है । यहां अहं पद वाच्य परमेश्वरने अपने को वेदान्तकृत् (वेदान्तस्य कर्तृत्वात् वेदान्तकृत्) वेदान्त का कर्त्ता कहा है एवं वेदं वेदार्थ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



यथावद् वेत्तीति वेदवित् वेद और उसके अर्थ (विषय) को यथा वत् (अन्यूनातिरिक्त) जानने वाला कहा है तथा इसके साथ इतर व्यावर्तक एव पद के प्रयोग से केवल अपने (परमेश्वर) को ही वेद वेत्ता प्रतिपादित किया है। यहसुनकर पं. दयानन्द आपत्ति करते हुये बोले इस श्लोक के तृतीय और चतुर्थ चरणों में अन्योन्याश्रय तदपेक्षापेक्षित्व निबन्धनोऽनिष्ट प्रसङ्गो ऽन्योन्याश्रय लक्षणमाला है। क्योंकि तृनीय चरण में ईश्वर को वेद द्वारा वेद्य कहा गया है और चतुर्थचरण में वेद का कर्ता ईश्वर को कहा गया है। इसप्रकार वेद से ईश्वर को एवं ईश्वर से वेद को सिद्ध (प्रमाणित) करने के कारण यहाँ स्पष्ट अन्योन्याश्रय परस्परा पेक्षत्वेन अन्योन्याश्रय तर्क दोष है। यहाँ सर्वदर्शन संग्रहकार ने जो 'किमुत्पत्तौ पराश्रयः शङ्क्यते ज्ञप्तौ वा ? नाद्यः आगमस्येश्व राधीनोत्पत्तिकत्वेऽपि परमेश्वरस्य नित्यत्वेनोत्पत्तेरनुपपत्तेः। नापि ज्ञप्तौ परमेश्वरस्यागमाधीनज्ञप्तिकत्वेऽपि तस्यान्यतोऽवगमात्। अर्थात् क्या उत्पत्ति के विषय में पराश्रय (अनन्याश्रय) की शङ्का कहते है या ज्ञप्ति ज्ञान के विषय में प्रथम उत्पत्ति के विषय में शङ्का नहीं की जा सकती। वेद का ईश्वर के अधीन उत्पादकता होने पर भी ईश्वर का नित्य होने से ईश्वर की उत्पत्ति की अनुपपत्ति (अप्रमाण) होने के कारण ईश्वर की उत्पत्ति विषयक शंका नहीं की जा सकती। इसीप्रकार द्वितीय (ज्ञप्ति) के विषय में भी शंका नहीं की जा सकती क्योंकि पर-मेश्वर का ज्ञान वेदाधीन होने पर भी ईश्वर वेद विषयक ज्ञान का कारण नहीं है वेद विषयक ज्ञान तो अन्य प्रकार अध्ययनादि के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



द्वारा होता है । इस प्रकार न तो उत्पत्ति के विषय में अन्यो न्याश्रय है और न ज्ञप्ति के विषय में ही ।' यह समाधान यहाँ सही नहीं है । क्योंकि यहाँ परमेश्वर का प्रमाण वेद से और वेद का प्रमाण ईश्वर से दिया गया है । वेद ईश्वरोक्त होने के कारण प्रामाणिक है और ईश्वर वेदोक्त होने से प्रामाणिक है । अतः यहाँ उत्पत्ति और ज्ञप्ति के विषय में अन्योन्याश्रय भले ही नहीं हो परन्तु प्रमाण के विषय में तो अन्योन्याश्रय अवश्य है । पं. दयानन्द का प्रत्युत्तर करते हुये पं. वेदानन्द बोले प्रमाण प्रमाण होते हुये भी प्रमेय भी है । न्याय सूत्र कार ने कहा है–'प्रमाणस्य प्रमेयत्वं तुलाप्रामाण्यवत्–न्या. सू. २।१।१६' तराजू दूसरों को मापने तौलने वाला प्रमाण है और वह स्वयं तौलाजाने का विषय होने जाने के कारण प्रमेय भी है । इसी प्रकार वेद और ईश्वर दोनों ही प्रमाण भी हैं और प्रमेय भी । जब वेद ईश्वर का प्रमाण होता है तब ईश्वर वेद का प्रमेय रहता है और जब ईश्वर वेद का प्रमाण रहता है तब वेद ईश्वर का प्रमेय रहता है । इस प्रकार एक समय में एक को प्रमाण और दूसरों को प्रमेय होने से इनमें प्रमाण के विषय में अन्योन्याश्रय नहीं है । वस्तुतः वेद का प्रमाण्य तो 'मन्त्रायुर्वेद प्रमाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्त प्रामाण्यात्–न्या. सू. २।१।६९ आयुर्वेद के वाक्य की प्रत्यक्ष सत्यता के समान यथार्थ वाक्य होने के कारण है और जैसे सूर्य को दिखाने के लिये दीपक या अन्य प्रकाश की आवश्यकता नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



प्रमाण होती वह स्वतः अपना प्रमाण है उसी प्रकार ईश्वर भी स्वतः प्रमाण है। न्याय सूत्र ने भी 'प्रदीयोपादान प्रसङ्गनिवृत्तिवत्तद्विनिवृत्ति न्या.सू. ५।१।१०' में एक प्रमाण को सिद्ध करने के लिये दूसरे प्रमाण की अनावश्यकता का सङ्केत किया है। किञ्च इस श्लोक में परमेश्वर ने अपने को 'वेद विद्' कहा है 'वेदकृत्' वेद का कर्त्ता नहीं कहा है। वेद मत वा मीमांसामत में शब्द और वेद नित्य है उसका कोई कर्त्ता नहीं है, वक्ता है, वेद अपौरुषेय है। अतः उत्पत्ति के विषय में भी अन्योन्याश्रय नहीं है पं. दयानन्द ने कहा भले ही परमेश्वर को वेद वित् कहा गया है परन्तु उसे वेदान्तकृत तो कहा ही गया है। अतः उसमें वेद कर्तृत्व तो अबाध है। पं. वेदानन्दजीने कहा—कर्ता कितने प्रकार का होता है। श्रीमद्रामायणजी का कर्ता महर्षि बाल्मीकिजी को कहा जाता है। परन्तु वे श्रीमद्रामायण के उत्पादक कर्ता नहीं है, उन्होंने ऋतम्भरा प्रज्ञा से नित्य श्रीरामचरित्र (रामायण) को देखा और उस भूत वर्तमान तथा भविष्य में होने वाले श्रीरामचरित को भी लिख दिया। इस प्रकार वे कर्ता नहीं द्रष्टा और लेखक मात्र थे। श्रीरामचरित्र का कर्ता तो श्रीरामजी ही हैं। इसी प्रकार पथार्थ विज्ञान (नित्य ज्ञान) जो ईश्वर ने कहा अथवा ऋषियों ने तप बल से देखा। अतः वे उसके कर्ता नहीं अपितु वक्ता और द्रष्टा कहलाये। न्यूटन ने पृथिवी के गुरुत्वाकर्षण नियम को सेव गिरते देखकर अन्वेषण किया। अतः न्यूटन गुरुत्वाकर्षण नियम


Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



का कर्ता नहीं प्रत्युत अन्वेषक या द्रष्टा मात्र है। इसी प्रकार वेद शाश्वत ज्ञान है उस शाश्वत नियम या ज्ञान का कोई कर्ता नहीं हो सकता वक्ता और द्रष्टा ही हो सकता है औपचारिक भाषा 'यष्टि भोजय' के समान उसके वक्ता ईश्वर या द्रष्टा ऋषियों को उसका कर्ता कहदिया जाता है। वेदान्तकृत् भी इसी प्रकार औपचारिक अलङ्कारिक वा लाक्षणिक प्रयोग है' पं. विवेकानन्दजी बीच में टपकते हुये बोले—वेदस्तत्त्वं तपोब्रह्म'—इस कोष वचनानुसार वेद शब्द ब्रह्म शब्द का पर्याय है। 'वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो' एवं 'वेद विदेव चाहम्' वाक्यों में पठित वेद शब्द का पर्याय ब्रह्म होने से इसका तात्पर्य है वेद (ब्रह्म) के द्वारा ही ब्रह्म ज्ञात वा ज्ञातव्य है। ब्रह्म के द्वारा ही ज्ञात होना सांख्य के शक्यकरणात् हेतु से भी सिद्ध है। यहाँ ब्रह्म को ब्रह्म द्वारा ही ज्ञातव्य होने में आत्माश्रय (स्वस्यस्वापेक्षामारोप्यानिष्ट प्रसङ्गः आत्माश्रयः) तर्क दोष नहीं कहा जा सकता 'प्रामाणिकत्वात् सूर्य ज्ञान वत्' सूर्य सूर्य के (अपने ही) द्वारा ही ज्ञातव्य है, दीपकादि के द्वारा नहीं 'खोजहि भानु दीप कर लीन्हे' नहीं। श्रीमद्भगवद्गीता में 'ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः—५।२०' में भी इस सिद्धान्त का सङ्केत है ब्रह्म (वेद) विद् ब्रह्म (परमेश्वर' में स्थित होता है एवं परमेश्वर को जानने वाला परमेश्वर में स्थित होता है। 'ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम्। ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ५।२४।' में पठित 'ब्रह्मैव तेनगन्तव्यं' एवं 'ब्रह्म कर्म समाधिना' के ब्रह्म शब्द या अर्थ वेद हो सकता है। 'ब्रह्मैव तेन गन्तव्यम्' में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



पठित ब्रह्म शब्द का अर्थ तप (देवद्विज गुरु प्राज्ञ पूजनं शौचमार्जवम्' ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते ।। अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियाहितं च यत् । स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते । मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः । भाव संशुद्धिरित्येतत्तपोमानसमुच्यते ।।) भी हो सकता है ।

इस प्रकार श्लोक के चारो चरणों की व्याख्या हो जाने पर अध्यक्ष ने इस श्लोक के तात्पर्य के विषय में वक्ताओं को प्रकाश डालने के लिये कहा । पं, गायत्र्यानन्दजी ने कहा कि इस श्लोक के 'सर्वस्यचाहं हृाद सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनञ्च' का तात्पर्य गायत्री उपासना में है । 'ज्योतिषामपि तज्ज्योति स्तमसः परमुच्यते । ज्ञान ज्ञेयं ज्ञान गम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ।' ज्ञान ज्योति रूप हृदयस्थ परमेश्वर ज्ञान प्रेरक का ध्यान करना ही गायत्री उपासना है—तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । षू प्रेरणे सुवति प्रेरयति । मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनञ्च उसी प्रेरणा का ज्ञापक है । पं. भागवतानन्दजी ने कहा श्रीमद्भागवत का आरम्भ 'सत्यं परं धीमहि एवं समापन भी 'सत्यं पर धीमहि' पर हुआ है । परन्तु पं, गायत्र्यानन्दजी ने कहा—यहां प्रश्न ध्यान का नहीं प्रत्युत बुद्धि प्रेरक के ध्यान का है और वह सत्य है उसी को यहां 'सत्यं पर धीमहि' से कहा गया है । पं. ज्ञानानन्द ने कहा 'वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृत् वेद विदेव चाहम्' श्लोक चरण में वेद वेद्य अथवा 'वेद्य' का ज्ञान तात्पर्य है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

# ॥ वेदोपदेश ॥

जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामप्रपन्नाचार्यजी

अर्वाची सुभगे ! भव सीते ! वन्दामहे त्वा ।
यथा नः सुभगाऽससि यथा नः सुफलाऽससि ॥३४॥

ऋ॰ ४।५७।६

घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः ।
सा नः सीते ! पयसाऽभ्यवृत्स्वोर्जस्वती
घृतवत्पिन्वमाना ॥३५॥ अथर्व॰ ३।१७।९
इन्द्रः सीतां निगृह्णातु तां पूषाऽनुयच्छतु ।

हल के द्वारा कर्षण से उत्पन्न होने पर देवगण श्रीसीताजी की स्तुति करते हैं—उत्तम ऐश्वर्य देने वाली तथा असुरों का अन्त करने वाली एवं हल के द्वारा कर्षण से पृथिवी से प्रकटित हे सीते ! हम देवगण आपको प्रणाम करते हैं । जिससे मह लोगों को उत्तम ऐश्वर्य दे कर तथा असुरों का नाशरूप प्रयोजन सिद्धकर आप शोभित हों ॥३४॥

श्रीसीताजी, विश्वेदेव तथा मरुद्गण आदि देवों के द्वारा घृत मधु से पूजित होकर उसी घृत मधुसे पुष्ट तथा परमतेजस्वी हो कर हम लोगों को दूध अन्न आदि से परिपूर्ण करें ॥३५॥

श्रीसीताजी के पाणिग्रहण काल में पुरोहित लोग मन्त्र बोलते है— पर ब्रह्म श्रीराम, शिवधनुषभङ्ग के पराक्रम से श्रीसीताजी को पत्नी रूप में ग्रहण करें। तथा पिता जनक श्रीराम को श्रीसीताजी का दान करें। जनक के द्वारा इस प्रकार श्रीराम को दी गयी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥३६॥
ऋ. ।४।५७।७

गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुं जयन्तमज्म प्रमृणन्तमोजसा ।
इमं सजाता अनुवीरयध्वमिन्द्रं सखायो
अनुसंरभध्वम् ॥३७॥ ऋ.१०।१०।३७

सुमंगलीरियं वधूरिमां समे तपश्यत ।
सौभाग्यमस्यै दत्त्वायाऽथास्तं विपरेतन ॥३८॥
ऋ. १०।८५।३३

श्रीसीताजी हम लोगों की पृथ्वी को आगे आगे प्रति वर्ष अन्न आदि से परिपूर्ण करें ॥३६॥

स्वयंवर में उपस्थित राजाओं का बलात् श्रीसीताजी को ग्रहण करने का भाव देखकर जनक अथवा देवलोग उनसे कहते हैं—हे क्षत्रियगण ! ये श्रीराम शिवधनुष को अपने बल से तोड कर श्रीसीता को जीते हैं, ये वज्रबाहु हैं, तथा वराहावतार में पृथिवी के उद्धार करने वाले सर्व ऐश्वर्य से युक्त साक्षात् परब्रह्म ही हैं । यह सब विचार करके ही इनके विषय में बल प्रयोग का विचार करें । इनके प्रति आप लोगों का बल प्रयोग आप लोगों का अमंगलकारक ही होगा, इसलिये आप लोग इनके मित्र हो कर कोपके विषय में इनका ही अनुसरण करें । इनके ही ऊपर कोप नहीं करें ॥३७॥

कन्यादान करने के बाद श्रीसीता को सौंप कर जनक श्रीरामजी से कहते हैं—यह तुम्हारी पत्नी शुभ गुणों से पूर्ण है । इसको देखें, रक्षा करें और सहगामी हों कभी उपेक्षा नहीं करें अब इसको पतिसुख देने के लिये लौटकर अपने घर जाइये ।३८।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

# ॥ नीतिधर्मोपदेश ॥

जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरघुवराचार्यजी

आरोप्यते शिला शैले यत्नेन महता यथा ।
निपात्यते क्षणेनाध स्तथात्मा गुणदोषयोः ॥

जिस प्रकार बहुत यत्न करके एक बडे पत्थर को पहाडपर चडाया जाता है और गिराना हो तो तुरत ही एक क्षण में नीचे गिराया जाता है । इसी प्रकार अपनी आत्मा में सद्गुण लानेमें देर होती है और दोषी बनकर गिराने में कुछ भी देर नहीं होती ।

मुकुटे रोपितः काचश्चरणाभरणे मणिः ।
नहि दोषो मणेरस्ति किन्तु राधोरविज्ञता ॥

शिर के मुकुट पर काच चढाया जावे और पैरोंके आभूषण पर मणिधारण किया जावे तो मणिका कोई दोष नहीं होता किन्तु कर्ता की अनभिज्ञता (मूर्खता) ही सिद्ध होती है ।

बालादपि गृहीतव्यं युक्तमुक्तमनिषिभिः ।
रवेरविषये किं न प्रदीपस्य प्रकाशनम् ॥

बुद्धिमान को उचित है कि एक छोटे से बालकका भी युक्त वचन मानें क्योंकि जब सूर्यका प्रकाश नही होता तब प्रदीप से प्रकाश क्या नहीं लिया जाता ।

श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मण्डल के सन्त महन्तों का भव्य

# ॥ सत्कार समारोह ॥

११।१२।९३ शनिवार को देश विदेश में कई धर्म स्थानों एवं विद्या तथा संगीत के विद्यालय स्थापित करने वाले कीर्तनाचार्य श्रीदेवेन्द्र विजय जी महाराज [जय भगवान] ने मानव मन्दिर में श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मंडल के सन्त महन्तों को आमन्त्रित किया इस समारोह में महामण्लेश्वर अटलपीठाधीश्वर श्री मंगलानन्दजी महाराज गीता मंदिर महामण्डलेश्वर विश्वम्भर भारती

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



जी सरखेज उदासीन सम्प्रदाय के वेद मन्दिर के महाराज श्री जगविख्यात सन्त सेवी स्थान श्री जगदीश मन्दिर के महामण्डलेश्वर स्वामी श्रीरामेश्वरदासजी आदि षड् दर्शन सम्प्रदाय के महापुरुषों के साथ श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मण्डल के सन्त महन्तों का भव्य स्वागत हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता मण्डल के प्रधान अध्यक्ष श्री म. म. स्वामी श्रीशिवरामदासजी महाराज द्वारा सम्पन्न हुई। इस प्रसंग में श्रीरामानन्द वेदान्त को सहायता प्रदान की गई। तदर्थ धन्यवाद

२।१२।९३ गुरुवार को प्रेमदरवाजा स्थित श्री सरयुतीर्थ श्रीरामजी मन्दिर में श्रीसरयुदासजी महाराज की पुण्य स्मृति स्थानाध्यक्ष एवं श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मण्डल के प्रधान अध्यक्ष श्री म. स्वामी श्री शिवरामदासजी महाराज की अध्यक्षता में वडी ही भव्यता के साथ मनाई गई।

जिसमें मण्डल के करीब सभी सन्त महन्तों ने भाग लिया श्रीरामानन्द वेदान्त को सहायता प्रदान की गई। तदर्थधन्यवाद

लि० म. मं० रामावतारदास [रत्न] वेदान्तपीठ सांरगपुर

## ॥ विचार गोष्ठी ॥

१८–११–९३ गुरुवार लाभ पंचमी के दिन जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यपीठ श्रीकोशलेन्द्र मठ में आनन्दभाष्यसिंहासनासीन जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी की अध्यक्षता में स्थानीय श्रीरामानन्दीय विरक्त सन्त महन्तों की एक विचार गोष्ठी का आयोजन हुआ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



जिसमें श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के साहित्य प्रचार प्रसार एवं वेदान्त परीक्षा आदि विषयों पर विस्तृत चर्चा हुई ।

आचार्य श्री ने श्रीरामानन्द साहित्य एवं वेदान्त परीक्षा से सम्बन्धित प्रचार प्रसार प्रकाशन एवं सहयोग पर विशेष जोर दिया । उपस्थित सन्त महन्तों ने एक स्वर से इस कार्य में हर सम्भव प्रयत्न एवं सहकार करने का वचन दिया ।

इस वर्ष श्रीरामानन्द वेदान्त से शास्त्री एवं आचार्य परीक्षा में उत्तर्णीय विद्यार्थीयों कों रजत पदक प्रदान कराने के लिए आचार्यश्री के संकेत मात्र से ही हाथों हाथ सम्प्रदायाभिमानी महन्तों ने उसमें तुरन्त सहयोग का आस्वासन दिया जिसमें सर्व श्री श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मंडल के प्रधान अध्यक्ष श्री मं. स्वामी श्रीशिवरामदासजी महाराज ने महामण्डलेश्वर स्वामी श्रीरामशरणदासजी महाराज पदक इसी मंडल के महामन्त्री मं. मं. श्रीरामावतारदासजी (रत्न) ने पंडित सम्राट् स्वामी श्रीवैष्णवाचार्यजी महाराज पदक म. श्री मोहनदासजी महाराज द्वारा दिगम्बर तडाघीश श्री म. जयराम दासजी महाराज पदक स्व सम्प्रदायनिष्ठ श्री म. रामकुमारदासजी विरमगाम द्वारा महामण्डलेश्वर श्री म.जगदीशदासजी महाराज पदक एवं श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मण्डल द्वारा श्री. रा वि. वै. मण्डल पदक की तुरन्त घोषणा को गई ।

साहित्य एवं वेदान्त के उत्कर्ष एव सहायता के लिए इस सम्प्रदाय के सन्त महन्तों का तुरन्त तैयार हो जाना सम्प्रदाय के प्रति बढ़ते स्वाभिमान तथा ज्ञान उत्कर्ष का प्रतीक है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

# ॥ श्रीमद्भागवत ज्ञानयज्ञ महोत्सव ॥

( पिवत भागवतं रसमालयम् )

'नित्योत्सवं हि मन्दिरम्' के अनुसार श्रीसाकेतविहारीजी का मन्दिर–आचार्यपीठ अहमदावाद–७ में विविध प्रकार के उत्सव के आयोजन होते ही रहते हैं । प्रति पूर्णिमा में श्रीरामार्चा महापूजा या अन्य उत्सव समैये आचार्य पीठ के दैनिक कृत्यों में से गिने जाते हैं । सम्प्रति **आनन्दभाष्यसिंहासनासीन जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी के छत्रछाया** में पौषशुक्ल अष्टमी गुरुवार विक्रम संवत् २०५० से पौषशुक्ल पूर्णिमा गुरुवार तदनुसार दिनांक २०।१।९४ से २७।१।९४ तक श्रीमद्भागवत पारायण प्रवचन ज्ञानयज्ञ का आयोजन किया गया है । इस प्रसंग के मंगलोद्घाटक पद्मश्री महामहिमो पाध्याय पूज्य श्रीकेशवराम काशीराम शास्त्री (वांभणिया) हैं । ज्ञानामृत परिवेशक आचार्यपीठ के स्नातक श्रीरामानन्दवेदान्ताचार्य शास्त्री श्रीफूलशंकर गिरिजाशंकर व्यास (धर्माध्यक्ष पंचदेव मन्दिर, गान्धीनर) हैं ।

इस उत्सव के अयोजक श्रीनागजी कालोदास राज्यगुरु (लोएज) परिवार है जिसका कार्यवाहक आचार्यपीठ के स्नातक धर्माध्यक्ष श्रीवल्लभवेदान्ताचार्य शास्त्री श्रीशरच्चन्द्र मूलशंकर राज्यगुरु हैं ।

कथामृत पान का समय:– प्रातः ९-३० से १२ अपराह्न ३ से ६ है

कथास्थल :– **जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यपीठ सभाभवन**

श्रीकोसलेन्द्रमठ श्रीरामजी मन्दिर, सरखेज रोड पो० पालडी

अहमदावाद-३८०००७ संपर्क सूत्र-४३५१०७ एवं ४११००१

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF



# ५ आचार्य जयन्ती ५

आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जयन्ती माघ कृष्ण सप्तमी इस वर्ष दि० २ फरवरी बुधवार को आ रही है।

भारतभर में जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जयन्ती महोत्सव मनाने की तैयारी जोरों पर है।

स्थानीय कर्णावतीनगर में प्रसिद्ध गो सन्त सेवी स्थान श्री जगदीश मन्दिर एवं श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मंडल के सन्त महन्तों द्वारा इस बार बृहद् रूप में आचार्य जयन्ती मनाने का कार्यक्रम बनाया जा रहा है।

जिसमें श्रीआचार्यजी के जीवन से सम्बन्धित चर्चा सभा प्रवचन श्रीरामानन्द वेदान्त से शास्त्री तथा आचार्यपरीक्षोत्तीर्ण छात्रों का सम्मान पदक प्रदान शोभा यात्रा एवं धार्मिक सामाजिक तथा राजनितिक कार्य कर्ताओं का सम्मेलन आदि आयोजन करने का विचार चल रहा है।

शेष अगले अंकों में

श्रीरामानन्दाचार्यपीठश्रीशेषमठके धर्मप्रचारविभागसेधर्मप्रचारार्थप्रकाशित

५ मुद्रक–श्रीआनन्दभाष्यमुद्रणालय ५

आचार्यपीठ

श्रीकोसलेन्द्रमठ पो. पालडी, अहमदाबाद–३८०००७.

प्र. सं. प्रति श्री.....

३९७ पुस्तकालय वाल्मीकि अध्ययन संस्थान
Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu